वैदिकः सिद्धान्तः

योगी नरहरिनाथः

प्रकाशकः
विश्वहिन्दुमहासभा
जम्बूद्वीपीय बृहदआध्यात्मिक परिषद्

प्रचारकः
गणेशानन्दगिरिः

वितरकः
कल्पना कर्णा

मूल्यम् तिस्रो मुद्राः

ॐ 卐 गौः श्रीः

आत्मा खलु विश्वमूलम् ।
वेदोऽखिलो धर्ममूलम् ।
कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।
वसुधैव कुटुम्बकम् ।
सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा ।

ईशावास्यमिदं सर्वम् ।
सर्वं खल्विदं ब्रह्म ।
सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म ।
खम् ब्रह्म ।
सत्यं शिवं सुन्दरम् ।

साधुः

राध् साध् संसिद्धौ । राध्नोति साध्नोति परकार्यमिति साधुः,
न साधुः साधुरित्युक्तः साधना साधुरुच्यते ।
परार्थसाधकः साधुः सुलभा स्वार्थसाधना । १ ।

राधः साधश्च संसिद्धौ राधना साधना तथा ।
राधुः साधुः साधकश्च राधुता साधुता गुणः । २ ।

साधुवादो धन्यवादः साधोः साधुत्व-सम्भवः ।
साधुना साधुना कार्या लोककल्याण-साधना । ३ ।

साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग् व्यवसितो हि सः ।
सद्भावे साधुभावे च सदित्येव प्रयुज्यते । ४ ।

न तु कण्ठेन वदन्ति साधवः क्रिया केवलमुत्तरम् ।
यस्तु क्रियावान् पुरुषः स विद्वान् । न साधवः प्रत्युपकारकांक्षिणः । ५ ।

माता च पार्वती देवी पिता देवो महेश्वरः ।
बान्धवा मानवाः सर्वे स्वदेशो भुवनत्रयाम् । ६ ।

चित्तभू वित्तभू मत्तभूपालकोपासनावासनायासनानाम्भ्रमैः ।
साधुता साधुता साधिता साधिता किन्तया चिन्तया चिन्तयामः सिवम् । ७ ।

साधो ! साधित-शुद्ध-बुद्ध परमब्रह्मस्वरूपाध्वर !
प्रध्वस्ताखिल-वासनामल ! जगत्कल्याणकर्मोत्तर !
स्वार्थो नास्ति परम्परार्थघटने पाटीरधर्मा भवन् ।
भूयो जागृहि लोकसंग्रहविधौ धर्मोऽधुना विप्लुतः । ८ ।

उल्लोकानन्दसुधाशीधुरसोद्वेजितेन हृदयेन ।
अभिलषति लोकयात्रातिन्तिणीचर्वणरसान्तरं योगी । ९ ।

योगी जागर-स्वप्न-सौषुप्त-तुरीयपर्व-परिपाटीम् ।
चित्रामिव मणिमालां विमर्शसूत्रैक-गुम्फितामुद्वहति । १० ।

देहे विदेहभावो विमले सलिले कमल-तुल्योऽसौ ।
तिष्ठति समाजमध्ये स्वप्नावस्थान्वितो महायोगी । ११ ।

अष्टादशपुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम् ।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम् । १२ ।

परोपकाराय कटन्ति मेघाः परोपकाराय वहन्ति नद्यः ।
परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः परोपकाराय चलन्ति सन्तः । १३ ।

पिबन्ति नाम्भः स्वयमेव नद्यः स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः ।
धाराधरो वर्षति नात्महेतोः परोपकाराय सतां विभूतिः । १४ ।

सन्तः स्वयं परहिते विहिताऽभियोगाः ।
कर्मोपासनयामुक्तो धर्मकर्म प्रशिक्षणम् ।
लोकसङ्ग्रहमेवापि सम्पश्यन् कर्तुमर्हसि । १५ ।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः,
कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः । १६ ।

ददौदधीचिरादित्य-गण-कल्याण-कर्मणे ।
निजास्थीनि सुरेन्द्राय कीर्तिमूर्त्या स जीवति । १७ ।

विश्वामित्र-वशिष्ठाद्या बाल्मीकि-व्यास-नारदाः ।
बन्दा-श्रीरामदासाद्या भीष्म-द्रोण-कृपादयः । १८ ।

चाणक्य-विष्णुशर्माद्या राजधर्म-विशारदाः ।
ऋषिः परशुरामोऽपि धर्मरक्षारणे गतः । १९ ।

इत्थं शतसहस्राणि साधवो धर्मरक्षणे ।
रणेऽवतीर्य समये कृतकृत्या यशस्विनः । २० ।

मुनिना मनुना प्रोक्तं धर्मरक्षाकृते कृते ।
शस्त्रं द्विजातिभिर्ग्राह्यं धर्मो यत्रोपरुध्यते । २१ ।

अग्रतश्चतुरो वेदान् पृष्ठतः सशरं धनुः ।
इदं ब्राह्ममिदं क्षात्रं शापादपि शरादपि । २२ ।

महाभारत-विख्याता-द्रोणाचार्यस्य घोषणा ।
श्रद्धानन्दादयः शुद्धाभाजनानीह जाग्रति । २३ ।

हकीकतमुखाः ख्याताश्छात्रा धर्मस्य रक्षकाः ।
वरतन्तुमुखाः ख्याताः शिक्षका रक्षकाः क्षितेः । २४ ।

संक्षिप्त शब्दानुवाद

ॐ ईश्वर। 卐 कल्याण। गौः अहिंसाप्रतीक। श्रीः सुख समृद्धि। आत्मा ही विश्व का मूल है। वेद ही अखिल धर्म का मूल है। अठासी हजार ऋषि मुनि लोग निरन्तर विश्व में वैदिक सनातन आर्य धर्म का प्रचार करते थे। वही से वैदिक संस्कृति विश्वव्यापक होकर अनेक शाखा में विद्यमान है। सम्पूर्ण विश्व एक ही परिवार है। इस चराचर जगत् में ईश्वर व्याप्त है। यह स्थूल सूक्ष्म अणोरणीयान् महतो महीयान् विश्व ब्रह्मस्वरूप ही है। ब्रह्म सत् चित् आनन्द स्वरूप है।

साधु की परिभाषा

केवल नामधारी अथवा केवल रूपधारी साधु को साधु नहीं कहा जाता अपितु साधना को साधु कहा जाता है। जो साधना करे उसका नाम साधु होता है। नाम, रूप, कर्म तीनों हों तो सोने में सुगन्ध होता है। अतः साधु को साधक होना अनिवार्य है। साधना दो प्रकार की होती है। एक स्वार्थ-साधना, दूसरी परार्थ साधना। स्वार्थसाधना को भी साधु नहीं कहते। स्वार्थ-साधना तो सर्वत्र सुलभ है। जो परार्थ साधना करें, परोपकार की साधना करे, लोक परलोक की साधना करें। पराये हित की साधना करे, उसका नाम साधु होता है। उसी साधु को महाकुल, कुलीन, आर्य, सभ्य, सज्जन और साधु कहते हैं। चराचर जगत् के चौरासी लाख प्राणियों में जो जो परोपकार करते हैं वे सब साधु हैं। माता पार्वती देवी हैं, पिता महेश्वर शिव हैं, विश्व के समस्त मानव भाई बहिन हैं। तीनों लोक, सारा संसार स्वदेश है, विदेश नाम की वस्तु कहीं नहीं है, ऐसी जिसकी पावन भावना है, उदार दर्शन है, उस महान् आत्मा महात्मा को साधु कहते हैं। चित्तभू काम, वित्तभू धनिक, मत्त

भूपालक राजा तथा ऐसे ही लोगों की उपासना की वासना के आयास प्रयास में भ्रमण कर अमूल्य समय का व्यर्थ व्यय किया, वह साधुता भी तिरस्कृत की अपार मानसिक व्यथा मात्र कमाई, अब उस अर्थचिन्ता तथा स्वार्थचिन्ता को त्याग कर परार्थ चिन्ता परोपकार की साधना, पर शिव का ध्यान और सर्वलोक हित की साधना करेंगे कह कर जो निकल पड़ता है, उसको भी साधु कहते हैं।

जिसका व्यवसाय न्यायोचित है, उसको भी साधु ही मानना चाहिये। सद्भावना और साधु भावना को भी सत् साधु सन्त ही कहा जाता है। धन्यवाद को भी साधु साधु कह कर साधुवाद ही कहा जाता है। साधुवाद भी साधु के साधुत्व का परिणाम है। इस समय भी साधु को लोककल्याण की साधना करना है। क्योंकि साधु की उत्पत्ति और व्युत्पत्ति परोपकार साधना के लिये ही हुई है—साध्नोति परकार्यमिति साधुः। अर्थात् जो परार्थ कार्य साधन करे उसे साधु कहा जाता है। मेघ परोपकार के लिये वर्षा करते हैं। नदियां और नद आदि परोपकार के लिये ही वहते हैं। वृक्ष लता औषधी आदि भी परोपकार के लिये ही फलते हैं, एवं साधु सन्त भी परोपकार के लिये ही, चलते हैं। परोपकार के लिये ही बैठकर भी साधना करते हैं। अठ्ठासी हजार ऋषि मुनियों की वह जगत्पावनी परम्परा आज भी है। अब उस को विशेषतया सक्रिय करने की घड़ी आ गई है।

हे साधो ! तुमने शुद्ध बुद्ध पर ब्रह्म स्वरूप का अध्वर साधन किया है। जिससे तुम्हारे जन्मजन्मान्तरों की वासना का मल धुल गया निर्मल हो चुके हो। अब तुम्हारी व्यक्तिगत साधना की अवधि पूरी हो गई है। अब तो केवल जगत्कल्याण की साधना करनी है। स्वार्थ का लेश भी तुम्हारे में नहीं है। दीन दुःखियों का दुःख दूर करने के खिये ही तुमने यह जन्म लिया है। आज कामधेनु दुःखी है, धरती माता दुःखी है। धर्म दुःखी है। सारा संसार दुःखी है। वैदिक ऋषि मुनियों की वह पवित्र परोपकारप्रणाली सुखने लगी है, फिर से चला दो। आगे चल के दिखा दो। सब तुम्हारे पीछे चलेंगे। महाजना येन

गत: स पन्था: । नान्य: पन्था विद्यतेऽयनाय । दूसरा कोई मार्ग नहीं दीखता । अत: साधु का सम्बोधन करते हैं । असाधु से काम नहीं चला । फिर से तुम चन्दन बनकर आसपास के सबको सुगन्धमय चन्दन बना दो । संसार का सारा दुर्गन्ध हटे, सुगन्ध व्याप्त हो । लम्बे समय से परोपकार करते करते थके थे, सो गये थे, अब तो भोर भई । उठो जागो, कमर कसो । लोक सङ्ग्रह करो । सब को साथ लो, चलो, आगे चलो । धर्म की हत्या हो रही है । धर्म को बचाओ । धर्मो रक्षति रक्षित: । धर्म की रक्षा हम करेंगे तो हमारी रक्षा भी धर्म करेगा । परमपद प्राप्त युक्तात्मा युक्तात्मा महात्मा भी लोककल्याण के लिये ब्रह्मलोक का ब्रह्मानन्द त्यागकर भूलोक पर आजावो । व्यक्तिगत मुक्ति से सामाजिक भुक्ति बड़ी है । इसलिए कर्मकाण्ड और उपासना काण्ड से मुक्त होकर ज्ञानकाण्ड में चले गये हो तो भी लोकसग्रह के लिये धर्म कर्म उपासना का प्रशिक्षण कर करा कर निष्काम कर्म क्षेत्र में उतर जावो । क्यों कि वेद का आदेश है—कर्म करते हुए ही सौ वर्ष पर्यन्त जीवित रहने की इच्छा करो । कर्म से ही सनक जनक आदि देवर्षि ब्रह्मर्षि राजर्षि वैश्यर्षि शूद्रर्षि लोक सम्यक् सिद्धि को प्राप्त हुए हैं । परोपकार के लिए राजर्षि दधीचि ने अपनी सारी हड्डी भी इन्द्र को दे दी, आज भी कीर्तिमय मूर्ति से जीवित हैं । विश्वामित्र, चाणक्य, विष्णु शर्मा, रामदास, बन्दा आदि राजधर्मविशारद ऋषि मुनि लोग भी धर्मरक्षा के रण क्षेत्र में उत्रे, मार्ग दर्शन किया । इसी प्रकार शत सहस्र साधु सन्त स्वधर्म रक्षा के रणाङ्गण में उतर कर मार्ग दर्शक बने । स्वर्णिम इतिहास साक्षी है । वे महात्मा कृतकृत्य और यशस्वी हैं । सत्य युग के राजर्षि मनु ने भी कहा है—जिस समय अधर्म से धर्म का विरोध हो, उस समय ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य द्विजाति को भी शस्त्रग्रहण कर धर्म की रक्षा करना अनिवार्य है । आपत्काले मर्यादा नास्ति । निरापत्काल में निज-निज धर्म में रहना उचित है । महाभारत में द्रोणाचार्य की घोषणा इस प्रकार है:—हमारे आगे चारों वेद हैं, हमारे पीठ में धनुर्बाण हैं, हमारे साथ में ब्राह्मशक्ति और क्षात्रशक्ति, शाप से तथा शर से दोनों प्रकार से संसार के समर में सन्नद्ध हैं । आज फिर से द्रोणाचार्य की घोषणा करनी होगी । वरतन्तु मुनि

जैसे गुरु, कौत्स हकीकत राय जैसे शिष्य (शिक्षक और छात्र) धर्म के रक्षक इतिहास में अमर हैं । साधु श्रद्धानन्द जैसे स्वतन्त्रता सग्राम के सेनानी भी श्रद्धा के पात्र हैं । इनसे चेतना लेकर साधु समाज जागो । उत्तिष्ठ जागृहि । सोने का समय नहीं है । परोपकार पुण्य है, परपीडा पाप है । अट्ठारह पुराणों में व्यास जी के दो ही वचन हैं परोपकार साधना ही साधुता है । जय साधुता !

—योगी नरहरिनाथः

ॐ

विद्यार्थि लक्षणम्

काकचेष्टो बकध्यानः श्वनिद्रः शुद्धमानसः ।
ब्रह्मचारी मिताहारी विद्यर्थी पञ्चलक्षणः । १ ।

क्षणत्यागे कुतो विद्या कण त्यागे कुतो धनम् !
क्षणशः कणशश्चैव विद्यामर्थंच साधयेत् । २ ।

सुखार्थी चेत् त्यजेद् विद्यां विद्यार्थी चेत् त्यजेत् सुखम् ।
सुखार्थिनि कुतो विद्या विद्यार्थिनि कुतः सुखम् ? । ३ ।

क्लेशस्याङ्गमदत्वा सुखमेव सुखानि नेह लभ्यन्ते ।
जयति तुलामधिरूढो भास्वानिह जलदपटलानि ।

विद्या ददाति विनयं विनयाद् याति पात्रताम् ।
पात्रत्वाद् धनमाप्नोति धनाद् धर्मं ततः सुखम् । ५ ।

विद्यार्थी जीवलोकोऽयं विदेशमपि गच्छति ।
मुक्तार्थी मानसं याति हंसः सागरगोचरः । ६ ।

गुरु-शुश्रूषया विद्या पुष्कलेन धनेन वा ।
अथवा विद्यया विद्या चतुर्थं लोकसाधनम् । ७ ।
अभिवादन-शीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते, आयुर्विद्या यशो बलम् । ८ ।

जितेन्द्रियत्वं विनयस्य कारणं गुणप्रकर्षो विनयादवाप्यते ।
गुणप्रकर्षेण जनोऽनुरज्यते जनानुराग-प्रभवास्तु सम्पदः । ९

शनैः कन्था शनैः पन्थाः शनैः पर्वतलङ्घनम् ।
शनैर्विद्या शनैर्वित्तं पंचैतानि शनैः शनैः । १० ।

मातृशिक्षा पितुः शिक्षा गुरुशिक्षा त्रिशक्तयः ।
ब्रह्मविष्णुशिवात्मानस्त्रयो विद्याप्रदा मताः । ११ ।

मातापितरौ

माता शत्रुः पिता वैरी याभ्यां बाला न पाठिताः ।
न शोभन्ते सभामध्ये हंसमध्ये बका यथा । १२ ।

माता मित्रं पिता मित्रं याभ्यां बालाः सुपाठिताः ।
सुशोभन्ते सभामध्ये हंसमध्ये मरालवत् । १३ ।

माता माति पिता पाति यथाकाशधरातले ।
पितुर्दशगुणा माता गौरवेणातिरिच्यते । १४ ।

ॐ द्यौर्मे पिता । माता मे पृथिवी ।
पुत्रोऽहं पृथिव्याः । नमो मात्रे पृथिव्यै । १५ ।

राजपत्नी गुरोः पत्नी मित्रपत्नी तथैव च ।
पत्नीमाता स्वमाता च पञ्चैता मातरः स्मृताः । १६ ।

जनेता चोपनेता च यस्तु विद्यां प्रयच्छति ।
अन्नदाता भयत्राता पञ्चैते पितरः स्मृताः । १७ ।

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा ।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया । १८ ।

सर्वदेवमयी माता सर्वदेवमयः पिता ।
सर्वदेवमयाचार्यः सर्वदेवमयोऽतिथिः । १९ ।

शुद्धोऽसि बुद्धोऽसि निरंजनोऽसि संसारमायापरिवर्जितोऽसि ।
संसारस्वप्नं त्यज मोहनिद्रां मदालसा वाक्यमुवाच पुत्रम् । २० ।

अयोध्यामटवीं विद्धि विद्धि मां जनकात्मजाम् ।
रामं दशरथं विद्धि गच्छ पुत्र ! यथा सुखम् (सुमित्रा) । २१ ।

गोमाता

ॐ वाचं धेनुमुपासीत । तस्याश्चत्वारः स्तनाः । स्वाहाकारो वषट्कारो हन्तकारः । स्वधाकारस्तस्यै द्वौस्तनौ देवा उपजीवन्ति । स्वाहाकाञ्च वषट्-

कारञ्च हन्तकारं मनुष्याः । स्वधाकारं पितरस्तस्याः प्राण ऋषभो मनो वत्सः ।
ऊर्जन्दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु । २२ ।

कल्याणी वेदवाणी

ॐ यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः । ब्रह्मराजन्याभ्यां
शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च । २३ ।
यन्तु नद्यो वर्षन्तु पर्जन्याः सुपिप्पलाऽओषयो भवन्तु ।
अन्नवतामोदनवतामामिक्षवतामेषां राजा भूयासम् । २४ ।
औदनमुद्ब्रुवते-परमेष्ठी वा एष यदोदनः । परमामेवैनं श्रियं गमयति ।
अन्नं न निन्द्यात् । अन्नं न परिचक्षीत । अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात् । अन्नं
बहु कुर्वीत तद् व्रतम् । बहुधान्यवसुन्धरा ।
अन्नं ब्रह्मा रसो विष्णुर्भोक्ता देवो महेश्वरः ।
एवं ज्ञात्वा तु यो भुङ्क्ते सोऽन्नदोषैर्न लिप्यते । २५ ।
सह नाववतु । सह नौ भुनक्तु । सह वीर्यं करवावहै ।
तेजास्वि नावधीतमस्तु । मा विद्विषाव है । २६ ।

गुरुः

गु—शब्दस्त्वन्धकारः स्याद्, रु—शब्दस्तन्निरोधकः ।
अन्धकारनिरोधित्वाद्, गुरुरित्यभिधीयते ।

आचार्यः

आचिनोति च शास्त्रार्थानाचारे स्थापयत्यपि ।
स्वयमाचरते यस्मात् तस्मादाचार्य उच्यते ।

पण्डिताः

विद्या-विनय-सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ।
यस्य सर्वे समारम्भाः काम-संकल्प-वर्जिताः ।
ज्ञानाग्नि-दग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः ।

परीक्षकाः

परीक्षका यत्र न सन्ति देशे, नार्घन्ति रत्नानि समुद्रजानि ।
मूर्खस्य देशे किल चन्द्रकान्तं भिभिर्वराटैर्विपणन्ति गोपाः ।

राजा प्रजाः

राज्ञि धर्मणि धर्मिष्ठाः पापे पापाः समे समाः ।
राजानमनुवर्तन्ते यथा राजा तथा प्रजाः ।
कालस्य कारणं राजा राजा वा कालकारणः ।
इति ते संशयो मा भूद राजा कालस्य कारणम् ।

अवधूतः

अवधूनोति यो मायां संसारस्य समन्ततः ।
योऽश्ववन्निर्मलात्मा च सोऽवधूतोऽभिधीयते ।

योगी

उल्लोकानन्दसुधाशीधुरसोद्वेजितेन हृदयेन ।
अभिलषति लोकयात्रा-तिन्तिणीचर्वणरसान्तरं योगी ।
योगी जागरस्वप्न-सौषुप्ततुरीय पर्वपरिपाटीम् ।
चित्रामिव मणिमालां विमर्श-सूत्रैक-गुम्फितामुद्वहति ।
देहे विदेहभावो विमले सलिले कमल-तुल्योऽसौ ।
तिष्ठति समाजमध्ये स्वप्नावस्थान्वितो महायोगी ।

नाथः

नाकारो नादिरूपः स्यात्, थकारः स्थापितः सदा ।
ब्रह्माण्डेऽखण्डरूपेण, नाथो ब्रह्म निरुच्यते ।

सिद्धः

सिद्धियोऽष्टौ यस्य सिद्धा निधयो नव साधिताः ।
अष्टाङ्गयोगसिद्धोऽसौ प्रज्ञा यस्य ऋतम्भरा ।

योगः

योगः कर्मसु कौशलम् । समत्वं योग उच्यते ।
संयोगं योगमित्याहुर्जीवात्म परमात्मनोः ।

स्थितप्रज्ञः

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः ।
यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता ।

शिवः

ॐ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च ।
मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ।

शिवशक्ती

शिवस्याभ्यन्तरे शक्तिः शक्तेरभ्यन्तरे शिवः ।
अन्तरं नैव जानीयाच्चन्द्रचन्द्रिकयोरिव ।
वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये ।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वती-परमेश्वरौ ।

वाणीविनायकौ

वर्णानामर्थसङ्घानां रसानां छन्दसामपि ।
मङ्गलानाञ्चकर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ ।
करबदरसदृशमखिलं भुवनतलं यत्प्रसादतः कवयः ।
पश्यन्ति सूक्ष्ममतयः सा जयति सरस्वती देवी ।
अन्तरायतिमिरोपशान्तये शान्तपावनमचिन्त्यवैभवम् ।
तं नरं वपुषि कुंजरं मुखे मन्महे किमपि तुन्दिलं महः ।

शम्भुः शङ्करः

शं सुखं जायते यस्मात् शं कल्याणं करोति यः ।
शं शांतिर्जायते यस्मात् शम्भुः शङ्कर उच्यते ।

गोरक्षः

शिवः श्री गोरक्षोऽभवदखिल-गोरक्षणकृते ।
गोरक्षो लोकधिया देशिकदृष्ट्या महेश्वरानन्दः ।

भावयोगः

यो यस्य भानयोगस्तस्य खलु स एव देवता भवति ।
तद्भावभाविता अभिलषितं तथा फलन्ति प्रतिमाः ।

नारायणः

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः ।
ता यदस्यायनं पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः ।

विष्णुः

वेवेष्टि व्याप्नोति जगद् विशत्यविरतं च यः ।
विशन्ति प्राणिनो यस्मिन् विष्णुस्तेन निगद्यते ।

रामः

रमन्ते योगिनो यस्मिन् सत्यानन्दे परात्मनि ।
तेन रामपदेनादः परं ब्रह्माभिधीयते ।

कृष्णः

कृष्णः कर्षति पापानि कृष्णः कर्षति विद्विषः ।
कृष्णः कर्षति चेतांसि कृष्णः कृष्णस्तनौ हरिः ।

ईश्वरः

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुष विशेष ईश्वरः ।

आत्मा

आत्मा खलु विश्वमूलं तत्र प्रमाणं न कोऽप्यर्थयते ।
कस्य वा भवति पिपासा गङ्गास्रोतसि निमग्नस्य !
माणिक्यप्रवेक इव निचोलितो निजमयूखलेखया ।
प्रतिभाति लौकिकान्नामत्यन्तस्फुटोऽप्यस्फुट आत्मा ।

प्रतिबिम्बम्

हन्तमुखं प्रतिबिम्बतु प्रतिबिम्बयतु तथपि दर्पणः ।
दर्पणः पुनर्यस्मिन् प्रतिबिम्बति सोऽपि ज्ञातव्वः ।

सृष्टिमूलकन्दः

सृष्टिर्मूलकन्दो भासा भासायाः पल्लवः सृष्टिः ।

लिपिभाषे

लिपिरक्षरविन्यासो भाषा भावस्य वाहनम् ।
लिपिभाषे परिज्ञाय भाषार्थमवगाहते ।
शब्दोऽर्थो ज्ञानमित्येतत् विकमेकम संस्थितम् ।

६४ वर्णमाला

स्वरा विंशतिरेकश्च स्पर्शानां पञ्चविंशतिः ।
यादयश्च स्मृता ह्यष्टौ चत्वारश्च यमाः स्मृताः ।
अनुस्वारो विसर्गश्च ॅ क ॅ पौ चापि पराश्रितौ ।
दुःस्पृष्टश्चेति विज्ञेयो लृकारः प्लुत एव च ।

शब्दसृष्टिः

आत्मा बुध्या समेत्यार्थान् मनो युङ्क्ते विवक्षया ।
मनः कायाग्निमाहन्ति स प्रेरयति मारुतम् ।
मारुतस्तूरसि चरन् मन्द्रं जनयति स्वरम् ।
वाग् बैखरी शब्दझरी विश्वं वाङ्मयमश्नुते ।
श्रोत्रोपलब्धिर्बुद्धिनिर्ग्राह्यः प्रयोगेणाभिज्वलित आकाशदेशः शब्दः ।
आकाशवायुप्रभवः शरीरात् समुच्चरन् वक्त्रमुपैति नादः ।
स्थानान्तरेषु प्रविभज्यमानो वर्णत्वमारच्छति यः स शब्दः ।
एकः शब्दः सम्याज् ज्ञातः सुप्रयुक्तः स्वर्गे लोके च कामधुग् भवति ।
तमक्षरं ब्रह्म परं पवित्रं गुहाशयं सम्यगुशन्ति विप्राः ।
स श्रेयसा चाभ्युदयेन चैव सम्यक् प्रयुक्त पुरुषं युनक्ति ।
वर्णज्ञानं वाग्विषयो यत्र च ब्रह्म वर्तते ।

तदर्थमिष्टबुध्यर्थं लघ्वर्थं चोपदिश्यते ।
अक्षरं नक्षरं विद्यादश्नोतेर्वा शरोऽक्षरम् ।
वर्णं वाहुः पूर्वसूत्रे किमर्थमुपदिश्यते ? ।
सोत्रमक्षरसमाम्नायो वाक्समाम्नायः ।
पुष्पितः फलतिश्चन्द्रतारकवत् प्रतिमण्डितो वेदितव्यो ।
ब्रह्मराशिः सर्ववेदपुण्यावाप्तिश्चास्य ज्ञाने भवति ।
मन्त्रो हीनः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह ।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात् ।
सम्यग् वर्णप्रयोगेण प्रयुक्तं ब्रह्म राजते ।
म्लेच्छो वा अपशब्दः । म्लेच्छा मा भूम इत्यध्येयं व्याकरणम् ।
गीती शीध्री शिरःकम्पी यथालिखितपाठकः ।
अनर्थज्ञोऽल्पकण्ठश्च षडेते पाठकाऽधमाः ।
माधुर्यमक्षरव्यक्तिः पदच्छेदस्तु सुस्वरः ।
धैर्यं लयसमर्थश्च षडेते पाठका गुणाः ।

षडङ्ग व्याख्यानम्

पदच्छेदः पदार्थोक्तिविग्रहो वाक्ययोजना ।
आक्षेपोऽथसमाधानं व्याख्यानं षड्विधं स्मृतम् ।

चतुर्विधा मात्राः

एकमात्रो भवेध्द्ध्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते ।
त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यंजनं चार्धमात्रकम् ।
ह्रस्वं लघु । संयोगे गुरु ।
संयुक्ताद्यं दीर्घं स्वानुस्वारं विसर्गसम्मिश्रम् ।
विज्ञेयमक्षरं गुरु पादान्तस्थं विकल्पेन ।

अष्टौ गणाः

आदि-मध्याऽवसानेषु भजसा यान्ति गौरवम् ।
यरता लाघवं यान्ति मनौ तु गुरु-लाघवम्

त्रिधावाङ्मयम्

गद्यं पद्यं तथा चम्पूस्वरूपं वाङ्मयं त्रिधा ।
संहितकपदे नित्या-नित्या-धातूपसर्गयोः ।
नित्या समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते ।

षट् समासाः

द्वन्द्वो द्विगुरपि चाहं मद्गेहे नित्यमव्ययीभावः ।
तत्पुरुष ! कर्म धारय येनाहं स्याम् बहुव्रीहिः ।

उपसर्गमहिमा

उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नीयते ।
प्रहाराहारसंहारविहारपरिहारवत् ।

सूत्रलक्षणम्

अल्पाक्षरमसन्दिग्धं सारवद् विश्वतो मुखम् ।
अस्तोभमनवद्यंच सूत्रं सूत्रविदो विदुः ।

षड्विधं सूत्रम्

संज्ञा च परिभाषा च विधिर्नियम एव च ।
अतिदेशोऽधिकारश्च षड्विधं सूत्रलक्षणम् ।

शिवसूत्राणि

नृत्यावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवपंच वारम् ।
उद्धर्तुंकामः सनकादिसिद्धानेतद् विमर्शे शिवसूत्रजालम् ।

अव्ययलक्षणम्

सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु ।
वचषुने च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम् ।

भागुरिमतम्

वष्टि भा गुरिरल्लोपमवाप्योरुपसर्गयोः ।
आपं चैव हलन्तानां यथा वाचा । निशा दिशा ।

असुलोपः

अवी-तन्त्री-तरी-लक्ष्मी-धी-ह्री-श्रीणामुणादितः ।
सप्त-स्त्री-लिङ्ग-शब्दानां सुलोपो न कदाचन ।

सुलोपः

सैष दाशरथी रामः सैष राजा युधिष्ठिरः ।
सैष कर्णो महादानी सैष भीमो महाबलीः ।

उपदेशाः

धातु-सूत्र-गणोणादि-वाक्य-लिङ्गानुशासनम् ।
आगम-प्रत्ययाऽऽदेशा उपदेशाः प्रकीर्तिताः ।

वाक्यशुद्धिः

वाणी व्याकरणेन शुध्याति शरच्चन्द्रेण सर्वा नदी ।
अव्याकरणा वाणी भिन्नतरण्या तरङ्गिणीतरणम् ।

वाङ्मयवृषभः

चत्वारि शृङ्गा त्रयोऽस्य पादा, द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽस्य ।
त्रेधा बद्धो वृषभो रोरवीति, महो देवो मर्त्यान् आविवेश ।

विश्वरूपाणि

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः ।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वोऽद्य दधातु मे ।

कर्मणा वर्णव्यवस्था

जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते ।
वेदाभ्यासाद् भवेद् विप्रो ब्राह्मणो ब्रह्मबोधतः ।

सुखदुःखलक्षणम्

सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम् ।
एतद् विद्यात् सभासेन लक्षणं सुखदुःखयोः ।

सुखमूलम्

सुखस्य मूलं धर्मः । धर्मस्य मूलमर्थः अर्थस्य मूलं राज्यम् । राज्यमूलमिन्द्रियजयः । इन्द्रियजयस्य मूलं विनयः । विनयस्य मूलं वृद्धोपसेवा । वृद्धसेवया विज्ञानं भवति ।

धर्मलक्षणम्

धारणम् पोषणं धर्मः धारणाद् धर्ममित्याहुर्धर्मो धारयते प्रजाः ।
यत् स्याद् धारणसंयुक्तं स धर्म इति निश्चयः ।

चतुरशाखो धर्मवृक्षः

श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः ।
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद् धर्मस्य लक्षणम् ।

दशधा धर्मलक्षणम्

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ।

लोकद्वयसाधको धर्मः

यतोऽभ्युदय-निश्रेयससिद्धिः स धर्मः ।

धर्ममूलम् विश्वमूलम्

वेदोऽखिलो धर्ममूलम् । आत्मा खलु विश्वमूलम् ।

सृष्टिमूलकन्दः

सृष्टेर्मूलकन्दो भासा भासायाः पल्लवः सृष्टिः ।

धर्मरक्षको वेदकल्पवृक्षः

ॐ कारप्रौढ़मूलः क्रमपदसहितच्छन्द-विस्तीर्णशाखः ।
ऋक्पत्रः सामपुष्पो यजुरधिकफलोऽथर्वगन्धन्दधानः ।
यज्ञच्छायासमेतो द्विजमधुपगणैः सेव्यमानः प्रभाते
मध्ये सायं त्रिकालं सुझरितचरितः पातु वो वेदवृक्षः ।

(क्रमशः)

संग्राहकः
योगी नरहरिनाथः
जम्बूद्वीपीय-बृहदाध्यात्मिक-परिषद

ॐ

विश्वनाथ-कृपा-दृष्टचा विश्वकल्याण-काम्यया ।
विश्वहिन्दु-हिता जाता विश्वहिन्दु-महासभा ॥

विश्वहिन्दु-महासभा

समग्र विश्व के हिन्दुओं का हित करने के लिये विश्वहिन्दु महासभा का जन्म हुआ है । ॐ कारको मूल मन्त्र माननेवाले, गौ को माता मानने वाले, संस्कृत भाषा में नाम रखनेवाले, वेद का आदि ज्ञानराशि मानने वाले विश्व के समस्त मानव हिन्दु हैं । हिन्दुधर्म मानव धर्म है । हिन्दुहित साधना द्वारा मानव मात्र नहीं, अपितु समस्त प्राणियों का कल्याण करना विश्वहिन्दु महासभा का मूल उद्देश्य है ।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्, कुर्वन्तो विश्वम् आर्यम्, करते हुए विश्व को आर्य, जैसे अठ्ठासी हजार महर्षिगण विश्व को यात्रा करते थे, वैसे ही आज भी यात्रा करना अनिवार्य है । गतिशील त्रिकालदर्शी महर्षियों की सभ्यता संस्कृति और धर्म को आर्यता अथवा हिन्दुता कहा जाता है । ऋष दर्शने, ऋष गतौ, ऋष ज्ञाने, दर्शन गति ज्ञान, त्रिकालदर्शी गतिशील ज्ञानी को ऋषि मुनि कहा जाता है । महान् ऋषि को महर्षि कहा जाता है । मन ज्ञाने, मनु अवबोधने से मनु और मुनि बनता है । मन्तारो वेदतन्त्रावगन्तारो मुनयः मनवश्च मननशील वेदके तत्वज्ञ सर्वज्ञ ज्ञानी जनों को मुनि और मनु कहा जाता है । मुनि से मौन बनता है । मनु से मानव बनता है ।

मानव से मानवता बनती है। ऋषि मुनि महर्षि महामुनि मनु मानव मानवता प्रभृतियों की उत्पत्ति ऐसे होती है। इन बातों को जानना जनाना मानना मनाना प्रत्येक मानवका प्रथम कर्तव्य है।

विद् सत्तायाम्, विदलृलाभे, विद् ज्ञाने से विद्या वेद वेदी विद्वान् विद्यार्थी विद्यार्थिनी विद्यालय विश्वविद्यालय आदि बनते हैं। महाकुल कुलीन आर्य सभ्य सज्जन साधुको सिन्धु अथवा हिन्दु कहा जाता है। हिन्दु ऋषि मुनियों की सन्तति है। हिन्दु के धर्म संस्कृति सभ्यता भावना प्रभृति हिन्दुत्व कहलाते हैं। हिन्दु में हिन्दुत्व होता है। हिमालय विश्व का मेरुदण्ड और मानदण्ड है। हिमालय के हि, कन्या कुमारी के इन्दुसरोवर के इन्दु को मिलाने से हीन्दु से हिन्दु होता है। हिन्दुवों का स्थान हिन्दुस्थान कहलाता है। हिन्दु स्थान के रहने वाले सभी हिन्दुस्थानोय हिन्दुस्थानो कहलाते हैं। हिन्दुस्थान हिन्दुदेश हिन्दुराज्य हिन्दुराष्ट्र है। हिन्दुस्थान से हिन्दुत्व लेकर विश्व के किसी देश में बसे हों, सभी हिन्दु बन्धुवर्ग हिन्दु हैं। विश्व भर के हिन्दुओं का हित करना विश्वहिन्दु महासभा का स्वाभाविक धर्म है। संहिता और संहति में सबका हित निहित है। अतः विश्वकल्याणकारी परमपिता परमात्मा के निश्वास वेद कहते हैं—

सङ्गच्छध्वम्। संबदध्वम्। सं वो मनांसि जानताम्। सङ्गठन करो, सम्मेलन करो, सभ्यता से सब मिलकर सभामें शान्त दान्त स्वस्थ होकर बैठो। संवाद करो, भद्रभाषा में प्रश्न उत्तर शङ्का समाधान करो, विवाद मत करो। तब तुम्हारे मनमें सत्यं शिवं सुन्दरम्, सत्यं ज्ञानम् अनन्तं ब्रह्म का बोध होगा। ज्ञानी तो परमात्माका भी आत्मा होता है—ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्। अज्ञानी लोग लड़ते हैं।

ज्ञानी नहीं लड़ते। सिन्धु के समान असंख्यगुणरत्नों के अखण्ड भण्डार को हिन्दु कहते हैं। हिन्दुकी भावना ऐसी है—

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत् ॥

संसार के समस्त चौरासीलाख जाति के चराचर प्राणीगण सर्वदा सर्वथा सर्वत्र सुखी रहें, सभी निरोगी रहें, किसी को कोई भी रोग न लगे, सभी भला करें भला ही देखें, किसी को कोई भी दुःख देखना न पड़े। सुखी सभी हों, दुःखी एक भी न हो। यह हिन्दुभावना है। हिन्दुधर्म ही मानवधर्म है। विश्व में मानव धर्म का प्रचार प्रसार कर विश्व को सर्वथा सर्वथा सर्वत्र स्वस्थ रखना विश्वहिन्दु महासभा का मूल उद्देश्य है। इससे सहमत समस्त हिन्दु विश्व हिन्दु महासभा के सदस्य बन सकते हैं। धन्यवाद।

सह नाववतु। सह नौ भुनक्त। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधी तमस्तु। मा विद्विषावहै ॥

विक्रमसंवत् २०४४	**योगी नरहरिनाथः**
शकसंवत् १९०९	कुरुक्षेत्रम्
सूर्यग्रहणपर्वणि	अध्यातमविद्यालयः

हिन्दुहित-हमारा मूल उद्देश्य है

स्वतन्त्रता-हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है

हिमालयं समारभ्य यावदिन्दुसरोवरम् ।
तं देवनिर्मितं देशं हिन्दुस्थानं प्रचक्षते ॥

देवगुरु बृहस्पति को इस घोषणा के अनुसार सुदूरपर्यन्त सागर सहित समग्र जम्बूद्वीप देवदेश ऋषिदेश आर्यदेश सिन्धुदेश हिन्दुदेश हिन्दुओं का मूल स्थान हिन्दुस्थान है। हिन्दुस्थान को हिन्दुराष्ट्र घोषित करना है। पचासी प्रतिशत हिन्दुओं के देश भारत को हिन्दु राज्य घोषित करना है। समस्त भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा को हिन्दुराष्ट्र भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा घोषित करना है। सृष्टि की आदिम ब्राह्मी लिपि से बनी देवनागरी लिपि को राष्ट्रलिपि घोषित करना है। अध्यात्मवादी वैदिक सनातन हिन्दुधर्म को हिन्दुराष्ट्र का राष्ट्रधर्म घोषित करना है। धर्मनिरपेक्ष को धर्मसापेक्ष बनाना है। धर्मसापेक्ष हिन्दुराष्ट्र में गोवंशहत्या पातकका सर्वथा निषेध करना है। नारदादि देवर्षि, वशिष्ठादि ब्रह्मर्षि, विश्वामित्रादि राजर्षि, श्रवणादि वैश्यर्षि, वाल्मीक्यादि शूद्रर्षि, संयुक्त अट्ठासी हजार ऋषि मुनियों द्वारा प्रवर्तित-सत्यं वद। धर्मं चर। मातृदेवो भव। पितृदेवो भवा आचार्य देवो भव। अतिथिदेवो भव। कहनेवाली अपनी ही शिक्षाप्रणाली चलानी है। चैत्र वैशाख, मास पक्ष, शक संवत्, रवि सोम, प्रतिपदा-द्वितीया आदि कहने वाली अपनी ही समयसारिणी चलानी है। सभ्यता संस्कृति अपनी ही रखनी है। हिन्दू की वेदोदित परिभाषा ऐसी है :—

ॐ हिमवतः प्रस्रवन्ति सिन्धौ समहसङ्गमः ।
आपो ह मह्यं तद् देवीर्ददन् हृद्योतभेषजम् ॥

यस्येमे हिमवन्तो महित्वाः । हिन्दुः सिन्धुभवः । सप्त सिन्धवः ।
अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा, हिमालयो नाम नगाधिराजः ।
पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य, स्थितः पथिव्या इव मानदण्डः ॥

हिन्दुः । हिन्दू । हिन्दुविश्वविद्यालयः

हिन्दुः सिन्धुभवो हिन्दू हिंसया दूयते यतः ।
हिंसाया दूरतो यश्च हिंसां दूरयते यतः ॥
हिंसा दूरे यतस्तिष्ठेद् हिन्दुर्हिन्दू निगद्यते ।
वेदानुकूलाचारश्च सदाचरण तत्परः ॥
हिमालयं समाराभ्य यावदिन्दुसरोवरम् ।
तं देवनिर्मितं देशं हिन्दुस्थानं प्रचक्षते ॥
नेता सिन्धूनाम् । सप्त सिन्धवः । सप्त-सप्तासो नद्यः ।
हिमवतः प्रस्रवन्ति सिन्धौ समहसङ्गमः ।
आपो ह मह्यं तद देवींददन् हृद्योत भेषजम् ॥
यस्येमे हिमवन्तो महित्वाः ।

वेद में नदी नद समुद्र को सिन्धु कहा जाता है। वेद का सिन्धु लोक में हिन्दु कहा जाता है। नदी नद समुद्र के तट आसपास परिसरों में रहने वाले लोग सिन्धु किंवा हिन्दु कहलाते हैं।

जो हिंसा से खिन्न होता हो, जो हिंसा से दूर रहता हो, जो हिंसा को दूर करता हो, जिससे हिंसा दूर रहती हो, उसको हिन्दू कहा जाता है। जो हीनता से दूर रहे, हीनता को दूर करे, हीनता जिस से दूर रहे, वह हिन्दू है। जो वेदोऽखिलो धर्ममूलम्-कहकर वेदों को धर्म का मूल मानता हो, मुखं किमस्यासीद् ? किं बाहू ? किमूरू ? पादावुच्येते ? ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्। बाहू राजन्यः कृतः । ऊरू तदस्य यद् वैश्यः । पद्भ्यां शूद्रोऽ अजायत ॥ इस विराट् विश्व का मुख क्या था ?

भुजायें क्या थीं ? पेट क्या था ? पावं क्या थे ? इन प्रश्नों का उत्तर—ब्राह्मण मुख था। क्षत्रिय बाहु थे। वैश्य पेट था। शूद्र पाव थे। एक शरीर में चार अङ्ग सम्बद्ध थे हैं रहेंगे। जो सत् आचरण में तत्पर हो, वह ब्राह्मण हिन्दु है। जो सदा चरण में तत्पर हो। वह क्षत्रिय हिन्दू है। जो सदा आचरण वह वैश्य हिन्दू है। जो सदाचरण में तत्पर हो, वह शूद्र हिन्दू है। एवं शिक्षाजीवी ब्राह्मण, रक्षाजीवी क्षत्रिय, पुष्टि जीवी वैश्य, सेवाजीवी शूद्र हिन्दू हैं।

हिमालय बिशाल है, हिमालयका हि, कन्या कुमारी के इन्दु सरोवर का इन्दु, इन दोनों को मिलाने से होन्दु किंवा हिन्दु होता है। इस देवताओं के द्वारा निर्मित देश का नाम हिन्दुस्थान हिन्दुओं का स्थान है। हिन्दुओं का राष्ट्र हिन्दु-राष्ट्र है। हिन्दुस्थान से हिन्दुस्तान हिन्दोस्तां इण्डिया आदि बने हैं।

हिन्दु ॐ को मूल मन्त्र मानता है—ॐ भूर्भुवःस्वः। ॐ मणिपद्मेहं। ॐ णमो अरिहन्ताणम्। १ ॐ कार सत् गुरुप्रसाद। ॐ ऐं हीं क्लीं। इत्यादि ॐ कारमूलक मन्त्र जपता है। गौ को माता मानता है। संस्कृत में नाम रखता है। वेद को आदि ज्ञानराशि मानता है। ऐसी हिन्दु की मान्यता है। हिन्दुके धर्म को हिन्दु धर्म कहा जाता है। हिन्दु की संस्कृति को हिन्दु संस्कृति कहा जाता है। हिन्दु की सभ्यता को हिन्दुसभ्यता कहा जाता है। हिन्दुकी लिपि भाषा सभ्यता संस्कृति धर्म दर्शन कर्मकाण्ड उपासनाकाण्ड ज्ञानकाण्डज्ञ आदि अशेष विद्या को पढ़ाने के लिये हिन्दुविश्वविद्यालय चलाना है। विश्व भर के हिन्दु इस हिन्दुविश्व- विद्यालय में हिन्दुत्व की शिक्षा प्राप्त करेंगे।

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्व स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः ॥

योगी नरहरिनाथः
जम्बूद्वीपीय बृहदाध्यात्मिक परिषदः

ॐ

मातृभाषा-मुखेनैव संस्कृतं ज्ञायतेऽखिलैः

(मातृभाषा द्वारा ही सब लोग संस्कृत जान सकते हैं।)

मातृभाषा-मुखेनैव संस्कृतं ज्ञायतेऽखिलैः।
सर्वेषामेव बालानां मातैव प्रथमा गुरुः ॥१॥
बालकानां समस्तानां द्वितीयस्तु पिता गुरुः।
शिक्षार्थिनां समेषाञ्च तृतीयश्च गुरुर्गुरुः ॥२॥
सखायश्च सहायाश्च चतुर्था गुरवो मताः।
प्राणिनामखिलानाञ्च प्रकृतिः पञ्चमी गुरुः ॥३॥
पाञ्चभौतिक-संसारे पञ्चधा गुरवः स्थिताः।
मातृशिक्षादिहीनानां गुरुः प्रकृतिरेव हि ॥४॥
प्राकृतानां पदार्थानां प्रकृत्या सर्वशिक्षणम्।
शिशूनामखिलानां हि मातृभाषा स्वभावजा ॥५॥
संसारे सकला भाषाः संस्कृतादुत्थिताः क्रमात्।
भाषाणां मातृभाषा च संस्कृतं नात्र संशयः ॥६॥
मातरो मादर प्रोक्ता मदर क्रमशः पराः।
पितरः फिदर प्रोक्ताः फादर क्रमशः परे ॥७॥
भ्रातरो ब्रादर प्रोक्ता ब्रदर्साद्याः क्रमात् परे।
स्वसारः सिस्टर प्रोक्ता दोख्तर दुहितरस्तथा ॥८॥
सप्तसिन्धु हप्तहिन्दु हस्ती हाथी दरो डर।
हस्ताक्षरं दस्तखत् स्यात् सत्यं हक्क सुखी खुश ॥९॥

अनिवार्यम् इमर्जेन्सी श्यलम् रेल काउ गौः ।
पूत पुत्रः सुपुत्रस्तु सपूत कमलं कमल् ॥१०॥
पुस्तकं पुस्तक प्रोक्तं मस्तकं मस्तक स्थितम् ।
छत्रं छत्र पत्र पत्रं पात्रं पात्र गृहं गृह ॥११॥
वृक्षो वृक्ष लक्ष लक्षं रक्षा—कक्षादयः समाः ।
क्षेत्रं खेत वेत वेत्रं पत्रं पात बटो वड ॥१२॥
किड़ा फीटाः पाट पट्टं घोटा घोडा घटा घड़ा ।
घट्टं घाट खाट खट्वा हट्टं हाट तटी तट ॥१३॥
काष्ठं काठ मठ मठो ज्येष्ठो जेठा शठः शठ ।
सुष्ठु ठीक कुठारस्तु कुलाडी वडिया वरम् ॥१४॥
शस्त्रं शास्त्रं शस्त्र शास्त्र अस्त्रं अस्त्र रणो रण ।
चुनार चरणाद्रिश्च वाराणसी वनारस ॥१५॥
गौरी सरस्वती लक्ष्मी रमा रामा दया गया ।
जया जाया कृपा पाली लीला लाला कला बला ॥१६॥
गङ्गा गीता च गायत्री गदा गोदा गरीयसी ।
काशी गोदावरी कोशी सरयू रसना सिता ॥१७॥
गण्डकी दण्डिनी गण्डी चण्डी दण्डी भुशुण्डिका ।
कूष्माण्डा चण्डिका मुण्डी चामुण्डा खण्डमालिका ॥१८॥
कालिका मालिका माला बाला वल्ली लता लया ।
दुर्गा देवी महोदेवी महेशानी दशा दिशा ॥१९॥
पराम्बा पार्वती माता सती साध्वी शिवा शुभा ।
सावित्री विदुला सीता गार्गीवागम्भृणी तिला ॥२०॥
दमदन्ती च कुन्ती च द्रौपदी भद्रिकाऽभया ।
आत्रेयी चैव मैत्रेयी चूडाला भृकुटी भटी ॥२१॥
धर्ममाला दीपमाला रत्नमालाऽब्जमालिका ।
मणिमाला पुष्पमाला पुण्यमालादयः समाः ॥२२॥

हस्तौ हाथ पाव पादौ मुखं मुख सुखं सुख ।
नासा नाक अक्षि आँख नखा नख शिखा शिखा ॥२३॥
दन्ता दांत आंत अन्त्रं रक्षा राखी सखा सखो ।
यन्त्रं तन्त्रं यन्त्र तन्त्र मन्त्रो मन्त्र पदं पद ॥२४॥
बलं बल नस स्नायुः फलं फल दलं दल ।
फुल्लं फूल मूल मूलं वल्कलं वक्कल स्मृतम् ॥२५॥
मृत्ती मिट्टी पद्म पद्मं स्वादः स्वाद रसो रस ।
सूत्रं सूत नेत्र नेत्रं गोत्रं गोत्र श्रुति श्रुतिः ॥२६॥
पर्वतः प्रर्वत प्रोक्तो गिरिर्गिरि निगद्यते ।
कम्बलः कम्मल पोक्तो विष्टरं बिस्तरा तथा ॥२७॥
निम्बो नीम समाख्यातः पिप्पलः पीपल स्मृतः ।
सालः साल पिलू पीलुः पर्कटी पाकड स्थितः ॥२८॥
खदिरः खयर प्रोक्तो दतिउन् दन्तधावनः ।
कोकटः कीकर प्रोक्तः अक्षोटः अखरोट च ॥२९॥
शिरीषः सिरस योक्तः करीर करवीरकः ।
उदुम्बरो गूलर स्याद् दूर्वा दूव कुशः कुश ॥३०॥
कासः कास पलासस्तु पलास शणकः सन ।
अर्क आक साग शाकः सतूत तूतिकातरुः ॥३१॥
सर्जः साज भूज भूर्जः कर्गजः कागज स्मृतः ।
घासं घास नल नलं तुषं भुस कणः कन ॥३२॥
गोधूमा गेहुं चणकाश्चना चावल तण्डुलाः ।
धान्यं धान जौ यवाः स्युस् तिलास् तिल गुडं गुड ॥३३॥
माषा मास आढकी च अरहर अतसी अलस् ।
मसूरा मसुर प्रोक्ता हरिद्रा हर्दि कथ्यते ॥३४॥
शुण्ठी सूँठ जिरा जीरं मरिचं मरिच स्मृतम् ।
जातिफलं जायफल जावित्री जातिपत्रकम् ॥३५॥

अजमोदा अजवायन लवणो लवन स्मृतः ।
सैन्धवं कथ्यते सेंधा हिङ्गु हींग निगद्यते ॥३६॥
यवक्षारो जवाखार कतकः फिटिकरी स्मृतः ।
केतकी केवड़ा प्रोक्ता चम्पकश् चांप कथ्यते ॥३७॥
कदली कथ्यते केला कोला केरा दलं दल ।
उपोदिका पोदिना स्यात् तुलसी कलसी समे ॥३८॥
स्थालो थाली करोटी च कटोरी कुटिया कुटी ।
कडा कटक आख्यातश् चटाई कट उच्यते ॥३९॥
मुकुटं मकुट प्रोक्तम् प्रकटी पगडी कृता ।
पट्टका स्यात् परिकरः कवचं कवच स्मृतम् ॥४०॥
धौती धोती उत्तरीयम् उपर्ना प्रच्छदश्छद ।
टोपी टोपस्तथाऽऽटोपः अङ्गोछा अङ्गप्रोक्षणम् ॥४१॥
मच्छरदानी तु मशकाधानी चोला च चोलिका ।
कञ्चुकं कांचली प्रोक्ता चर्म चाम चिता चिता ॥४२॥
चटका चिड़िया चिल्लश् चील गृध्रस्तु गीध च ।
काकः कौवा कोकिलस्तु कोयल बकुला बकः ॥४३॥
मत्सी मच्छी नाकु नक्रः कछुवा कच्छपः स्मृतः ।
बालुका कथ्यते बालू जलौका जोंक उच्यते ॥४४॥
प्रस्तरः पत्थर प्रोक्तः शिला सील नली नली ।
नौका नाव डुंगा द्रोणी कैवर्तः केवट स्मृतः ॥४५॥
फल्लवाटी फूलवाडी वटिका वाडि कथ्यते ।
आम्र आम जाम जम्बू बेल बिल्वः शमो समो ॥४६॥
मौलश्री बकुलः प्रोक्तः सरलो देवदारुवत् ।
वासा वासा तथैरण्डो रेडी धत्तूर धूर्तकः ॥४७॥
भङ्गा भाँग जाति जाती जुही यूथी जवा जपा ।
मोदरा मोगरा सिम्बो सीमी श्यामा च तत्समा ॥४८॥

अशोकस्तु अशोक स्यात्, निर्गुण्डी तत्समा मता ।
जयन्ती तत्समा प्रोक्ता वैजयन्ती च तत्समा ॥४९॥
गौरांशस्तु गुरांस स्यात् श्रीसूर्यकमलं समम् ।
चन्द्रकमलमेवं स्याद् ब्रह्मकमलमेव च ॥५०॥
इन्द्रकमलमेवं स्यात् स्थलपद्मं समं मतम् ।
सञ्जीवनी त्वपामार्गो विशल्यकरणी समा ॥५१॥
कथ्यते बिजली विद्युत् तारस् तार तपस् तप ।
सूर्यः सूरज आख्यातश् चन्द्रश् चांद ग्रहो ग्रह ॥५२॥
तारास् तारा च नक्षत्रं नक्षत्र गणितं गणित् ।
वर्षं वर्ष मास मासः पक्षः पक्ष तिथिस् तिथि ॥५३॥
अयनम् अयन प्रोक्तम् ऋतुश्च ऋतु कथ्यते ।
वारो वार योग यागः करणं करण स्मृतम् ॥५४॥
पञ्चाङ्गं चैव पंचांग गणनाः गणना मता ।
ज्यौतिषं ज्योतिष प्रोक्तं जोशी ज्यौतिषिको बुधः ॥५५॥
कर्पटाः कपडा सूत्रं सूत शृङ्गं च सींग च ।
धूर्वा धूमः कुवा कूपो रूपं रूप जपो जप ॥५६॥
शिल्पं सिप दिया दीपः सराप शाप उच्यते ।
दीपावली दिवाली च कौवाली कवली कृता ॥५७॥
दण्डा डण्डा गढा गर्त्ताः पणः पन फणा फन ।
वृषो कुर्सी मुसी मूषी मेषी मेखी मषी मसी ॥५८॥
अङ्गारस्तु अंगार स्यात् पार्श्वं वास पुटी पुडी ।
कङ्कालः कंगाल उक्तः कीलं कील नली नली ॥५९॥
लोहा लोहा सिसा सीसं पित्तलं पीतल स्मृतम् ।
कांस्यं काँसा राँग रंगस् ताम्रं तामा खुरः खुर ॥६०॥
किट्टं कीट टिका टीका चान्द्री चांदी चरुश् चरु ।
कटुका कडुवा प्रोक्ता चमसास् चमचा कृता ॥६१॥

भक्तं भात समाख्यातं दालं दाल कडी कटी ।
शाकं साग वेशवारो वेसार तेमनम् तिउन् ॥६२॥
घी घृतं तेल तैलं च मसाला मांसला मता ।
आर्द्रकम् अद्रक प्रोक्तं हरिद्रा हर्दि गद्यते ॥६३॥
पिप्पली पीपला प्रोक्ता जीरा जीरकमुच्यते ।
मेथिका कथ्यते मेथी वास्तुको वथुवा तथा ॥६४॥
कारवेल्लं करेला च पटोल परवल् तथा ।
अलाबू कथ्यते लौका भिण्डी भिण्डी हि भण्यते ॥६५॥
पालङ्की पालक प्रोक्ता चञ्चूकं चमसूर च ।
कर्कारुः कथ्यते कद्दू कूष्माण्डं काँहडा तथा ॥६६॥
तर्बुज् खरभुजा जाता गोजिह्वा गोभि भण्यते ।
भण्टाकी भण्यते भण्टा सर्षपः सरसू तथा ॥६७॥
राजिका कथ्यते राई मूला मूलकमुच्यते ।
पलाण्डुः पठ्यते प्याज लशुनं लसुन स्मृतम् ॥६८॥
गृञ्जनं गाजर प्रोक्तं कर्कटी ककडी कृता ।
पुनर्नवा पुन्नय स्यात् ऊख इक्षुः प्रजायते ॥६९॥
भ्रमरा भवरा मक्षी मखखी मशक मच्छर ।
मधुरा महुरा वत्स्यू बछयूँ वरल-दारुला ॥७०॥
महिषी भण्यते भैंस भैंसा महिष उच्यते ।
उष्ट्र ऊँट तथा हस्ती हाथी घोडा च घोटकाः ॥७१॥
गधा गर्दभ आख्यातः खचरः खच्चर स्मृतः ।
मेषो मेढा तथा हस्तौ बक्रा बक्री शशाः ससा ॥७२॥
हंसी हाँस बाँस वंशो मांसं मांस नखा नख ।
अस्थि हड्डी रक्त रक्तं मज्जा मज्जा त्वचा त्वचा ॥७३॥
रोम रोम चर्म चाम नस स्नायू रजो रज ।
शृङ्गं शृङ्ग पदं पाव अङ्गुली उँगली मता ॥७४॥

पिठरं पठ्यते पेट पृष्ठं पीठ च पठ्यते ॥ ७५ ॥
कक्षा काख मेरुदण्डः सुमेरु नयनं नयन् ।
मस्तिष्कं मस्तक प्रोक्तं तालु तालु शिखा शिखा ॥ ७६ ॥
ब्रह्मरन्ध्रं ब्रह्मरन्ध्र कर्णौ कान गला गलः ।
ग्रीवा गर्दन कुम्भौ च कुम बाहू च बाजू च ॥ ७७ ॥
कूर्परः कुहनी कण्ठः कण्ठ घण्टी च घण्टिका ।
कण्ठकूपः कण्ठकूप उपवीतं तथा समम् ॥ ७८ ॥
शकटः सग्गड़ प्रोक्तो गन्त्री गाडी निगद्यते ।
रयलं भण्यते रेल वायुयानं समं मतम् ॥ ७९ ॥
सूकरः सुवर प्रोक्तः कुक्कुरः कूकर स्मृतः ।
वर्तको बत्तक प्रोक्तः कुक्कुटः कुक्कड स्मृतः ॥ ८० ॥
चटका चिडिया चञ्चुश्चोञ्च बच्चा च वत्सकाः ।
औष्ठौ होठ जीभ जिह्वा कलेजा कालखण्डकः ॥ ८१ ॥
पद्मकोशः फुफ्फुस स्यात् पित्तं पित्त कफः कफ ।
वातो वाद दोष दोषः सन्निपातश्च तत्समः ॥ ८२ ॥
वातपित्तं वातपित्त रक्तपित्तञ्च तत्समम् ।
कफपित्तं समं प्रोक्तं वातरक्तादयस्तथा ॥ ८३ ॥
वाजो वाज धनेशस्तु धनेश गरुडो गरुड् ।
उलूक उल्लू लङ्कशः काष्ठकुट्टः समो मतः ॥ ८४ ॥
रस्सी रज्जुः साप सर्पः काँप कम्पः शफः सफ ।
खुरः खुर पदं पाव पुच्छं पूँछ स्तनः थन ॥ ८५ ॥
दुग्धं दूध दधि दही मट्ठा मथितमुच्यते ।
नवनीतं नौनि घृतं घी क्षीर खिर उच्यते ॥ ८६ ॥
मिश्री सितोपलः प्रोक्तः खण्डं खाँड जटी जडी ।
जटा जडाउ बालाश्च वाल रोम च रोम हि ॥ ८६ ॥
रोमकूपो रोमकूप प्रस्वेदाः पसिना मताः ।
पणाः पैसा आणिका च आना द्रम्मं च दाम हि ॥ ८७ ॥

रूप्यकाणि रूपिया च दीनारस्तु दिनार हि।
एकं द्वे त्रीणि चत्वारि पञ्च षट् सप्त चाष्ट च ॥ ८८ ॥
एक दो तीन चार स्यात् पांच छे सात आठ च।
इत्थं सख्या ऽखिला ज्ञेया तत्समा तद्भवा तथा ॥ ८९ ॥
प्रथमं पहला प्रोक्तं द्वितीयं दूसरा तथा।
तृतीयं तीसरा चौथा चतुर्थं पञ्चमं पुनः ॥ ९० ॥
पांचवाँ च छठा पृष्ठं सातवां सप्तम् मतम्।
अष्टमं आठवाँ प्रोक्तं नवमं च नवां तथा ॥ ९१ ॥
दशमं दसवां प्रोक्तमित्थमेकादशादयः।
गर्मी धर्मः शीतलं च शीतल प्रखरं खर ॥ ९२ ॥
लूश्च लू चक्रवातस्तु चक्रवात समो मतः।
तापस्ताप प्रतापश्च प्रताप तत्समाः सम ॥ ९३ ॥
सूची सुई सुती सूत्री सिङो श्रेणी शिरःसिर।
संख्या संख्या साखि साक्षी संख शङ्खः सरः सर ॥ ९४ ॥
श्यालः साला सुखा शुष्कं शाखा साका शुचिः सुचि।
तुरुष्कस् तुर्कि टर्की च सुखी सूफी सिताः सिया ॥ ९५ ॥
शुन्नी सुन्नी शेख शेषः प्रतिष्ठानः पठान च।
मृष्टंमिष्ट पिठो पिष्टं पिष्टी पिष्टी पांठी मढी ॥ ९६ ॥
ग्रामो गांव रिवां रेवा जिला जिल्ला जनो जन।
उपाध्यायस्तु ओज्झाय ओझा झा क्रमशोऽपरे ॥ ९७ ॥
राजा राया राय राइ राइका रैकादयोपरे।
ज्यौतिषी जोइसी जोशी जैशी जैसी तथा परे ॥ ९८ ॥
क्षत्रियः क्षत्रपः क्षत्रं क्षत्री छेत्री च खत्रि च।
वैश्यो वैस वैसवाड वणिजा बाणियां वणिक् ॥ ९९ ॥
शारिका कथिता मैना कौञ्चः कूँज शुकाः सुगा।
टिटिहिरी टिट्टिभी स्याद् भासो भास चटी चडी ॥ १०० ॥

क्यारी केदार आख्यातः पट्टी पट्टी निगद्यते।
सीमा सीमा सन्धि सन्धिस्तथाली तत्समा मता ॥ १०१ ॥
चित्रं चित्र कुची कूर्ची रङ्गो रङ्ग कला कला।
कलाकारः कलाकार कलाशाला च तत्समा ॥ १०२ ॥
समुद्रस्तु समुन्द्र स्यान्नदो नद नदी नदी।
कुल्या नहर नामा च कुवा कूपश्च कथ्यते ॥ १०३ ॥
अन्नजातम् अनाज स्याद् धान्यं धान धनं धन।
वनं वन लता वृक्षा लता वृक्ष क्षुपाश्छुप ॥ १०४ ॥
मूलं मूल तथा स्कन्धाः कन्ध शाखाः शिखा समाः।
विटपाष्टहनी पत्रं पात पुष्प-फले समे ॥ १०५ ॥
मूलस्थानं मूलतान हिङ्लाज हिङ्गुलाजकः।
खेवरः खैवर प्रोक्तो बोलान च बलानकः ॥ १०६ ॥
सिन्धुकोशो हिन्दुकुश काम्बोजः काबुल स्मृतः।
गान्धारश्चैव कन्धार वल्कं बलक उच्यते ॥ १०७ ॥
काकेशिया केकयः स्यान् मक्का च मुकुटेश्वरः।
ईशावास्यम् एशिया स्याद् विश्वस्यैवोपलक्षणम् ॥ १०८ ॥
पारसीकः फारस स्याद् अरब् अर्बुद उच्यते ॥ १०९ ॥
अपगानः स अफ्गान स्थानं स्तान निरुच्यते।
रोम रोम तत्समं स्यात् तुरुष्कष् तर्कि रट्यते ॥ ११० ॥
इष्टाली स्याद् इटाली तु पञ्च फ्रेञ्च निरुच्यते।
जर्मनी जर्मन प्रोक्तः शर्मन् शार्मण्य उच्यते ॥ १११ ॥
ऋषी रूस समाख्यातः प्राचीनः पेचिन स्मृतः।
चीन पेचीनयोः संज्ञा मेलच्छैः पेकिङ् निरुच्यते ॥ ११२ ॥
मङ्गोलिया मङ्गयीयष् टिवेट् तिब्बत् त्रिविष्टपम्।
जापान स्याज् जपानस्तु कोरिया कोटिया मता ॥ ११३ ॥

वर्मा वर्माऽभिधो देशः श्यामः श्याम निरुच्यते ।
इन्द्रस्येण्डोनेसिया च बाली बालिन एव हि ॥ ११४ ॥
जावा जवा यवद्वीपं सुमात्रा तत्समा स्थिता ।
अष्ट्रेलिया च इष्टाली गिलगीत इलावृत ॥ ११५ ॥
मारिषस्तु मोरिस स्यान् मलाया मलयाचलः ।
फिजी स्फीतीकृतं द्वीपं त्रीनिडाट त्रिविक्रमः ॥ ११६ ॥
अमेरिका अमरिका अफ्रिका अभ्रिका मता ।
इङ्गलेण्ड इङ्लैण्ड स्काट्लेण्ड कूटलेण्डकम् ॥ ११७ ॥
स्विट्जर्लेण्ड श्वेतद्वीपं न्यूजीलेण्ड निज मतम् ।
गोरक्षो गोरखा प्रोक्तो गोरक्षा गोरखा दयः ॥ ११८ ॥
द्विलक्षा दोलखा ख्याता यमला पालपादयः ॥
नेपालो नयपालः स्यात् सुक्षेमः सिक्किम स्मृतः ॥ ११९ ॥
दोर्जेलिङ्गं दार्जिलिङ्ग खर्साङ खरसाङ्गकम् ।
भूतायनं च भूटान वङ्गो बङ्गाल उच्यते ॥ १२० ॥
ढक्का ढाका समाख्याता वर्धमानस्तु तत्समः ।
त्रिपुरा त्रिपुरा प्रोक्ता कच्छाटस्तु कछाड हि ॥ १२१ ॥
मेघालयस्तत्समो हि नागाहिल् नागशैलकः ।
अरुणाचल आख्यातः सोऽरुणासुरपर्वतः ॥ १२२ ॥
तेजःपरं तत्समं हि मञ्जुरम्यो मिजोरम ।
शोणिताख्यपुरं तुल्यं तथा मणिपुरं समम् ॥ १२३ ॥
गोहट्टी गोहाटि चोक्ता समानः शिवसागरः ।
स्फीतगङ्गा तु विट्गाङ रङ्गोङ रङ्गुन स्मृतम् ॥ १२४ ॥
श्रृङ्गवेरपुरं रम्यं सिंगापुर निरुच्यते ।
मालावारद्वीप—संज्ञा कालपानीयवन् मता ॥ १२५ ॥
गोपा गोमन्तकं प्रोक्तं समो रत्नगिरिः स्मृतः ।
कैस्पियन् सागर प्रोक्तो वेदे कश्यपसागरः ॥१२६॥

योगी नरहरिनाथः

(क्रमशः)

शब्दानुवाद

आकाश मेरे पिता हैं। पृथ्वी मेरी माता हैं। मैं पृथ्वी माता का (की) पुत्र (पुत्री) हूं। पृथ्वी माता को नमस्कार है।

वन्दे मातरम्!

हे ईश्वर, हमको असत्य से सत्य में ले जाओ, तमस् से हमको ज्योति में ले जाओ, मृत्यु से हमको अमृत पद पर ले जाओ। हमारी माता पार्वती देवी पिता महेश्वर-देव हैं, विश्व के समस्त मानव भाई-बहन हैं, तीनों लोक स्वदेश हैं। सभी चराचर प्राणी सुखी हों, सभी निरोगी हों, सभी भला देखें, कोई एक भी दुःखी न हो। अखिल विश्व में जितने भी चर-अचर प्राणी हैं सभी के मन मंदिर में ईश्वर विराजमान है। यह जानकर त्याग भाव से भोग कर किसी के धन पर गृद्ध दृष्टि न लगाओ। जितने से पेट भर जाय उतने पर ही देहधारियों का स्वत्व है। उससे अधिक जो अपना समझकर अभिमान करे वह चोर है। उसको दण्ड देना चाहिए। धनी होकर जो दाता नहीं होता दरिद्र होकर जो परिश्रमी नहीं होता, उन दोनों के गले में बड़ी शिला बांधकर गहरे जल में डुबो देना चाहिए। दुष्ट को दण्ड देना सुजन को पूजा करना, न्यायपूर्वक कमाई से कोष की वृद्धि करना, सभी याचकों को निष्पक्ष भाव से दान देना, सभी प्रकार से राष्ट्र की रक्षा करना, ये पञ्चमहायज्ञ प्रत्येक मानव मात्र का नित्य करना चाहिए। तेतिस कोटि देवी देवता, अट्ठासी हजार ऋषि-मुनियों ने

मिलकर यजन किया अर्थात् देवताओं की पूजा की, मातृ-देवता पितृदेवता, गुरुदेवता, अतिथिदेवता की पूजा की, सत्संग किया दान दिया वे ही प्रथम धर्म थे। वे ऋषि मुनि देवतागण स्वयं भी पूज्य होकर स्वर्ग इत्यादि दिव्यलोकों के अधिकारी हुए। जहाँ साध्य आदि पूर्वज देवता लोग विराजमान हैं। मैं राज्य नहीं चाहता स्वर्ग नहीं चाहता, मुक्ति भी नहीं चाहता, केवल दुःखसंतप्त प्राणियों के दुःख को दूर करना चाहता हूं। मेरे जनपद में एक भी चोर नहीं है। एक भी कंजूस नहीं है, एक भी मद्य पीने वाला नहीं है, एक भी अग्निहोत्र न करने वाला नहीं है। मेरे देश में कोई भी अविद्वान् नहीं है अर्थात् साक्षर शिक्षित सर्वज्ञ तीन प्रकार के विद्वानों में सभी सर्वज्ञ विद्वान् हैं। स्वेच्छाचारी कुलटा व अनुशासनहीन एक भी नहीं है। जो परस्त्रियों को मातृवत् मानता है, दूसरे के धन को मिट्टी के ढेले के समान मानता है। संपूर्ण प्राणियों को अपने समान देखता है, वही यथार्थ में देखता है और वही पण्डित है। आंख से भली-भाँति देखकर भूमि पर पैर रखना चाहिए और वस्त्र से छानकर जल पीना चाहिये, सत्य से पवित्र वाणी बोलनी चाहिए, मन से छानकर सम्पूर्ण आचरण करना चाहिए, अपने प्रतिकूल कोई भी काम औरों के प्रति नहीं करना चाहिए।

सोने वाला आलसी कलियुग होता है। उठने की इच्छा करने वाला उठें या न उठें? कह कर पड़ा रहने वाला द्वापर युग होता है। संशयात्मा विनश्यति। दो पांव एक हाथ टेक कर उठने वाला उत्थानशील विकासोन्मुख त्रेता युग होता है। दो पाँव से खड़ा होकर लक्ष्य को स्थिर कर प्राञ्जल पथ से निरन्तर अग्रसर होने वाला गतिशील सत्ययुग होता है। वह व्यक्ति हो, समाज हो, राष्ट्र हो, विश्व हो। वेद में चारों युगों की परिभाषा ऐसी है। पौराणिक गणना अनुसार नहीं है। यह वैदिक चर्या है। इसके अनुसार हम सबको सदा प्रगतिशील होना चाहिये। अरे मानवो! उठो, जागो, जानने वालों के पास जाकर जानने योग्य बातें जानो। उत्थान करना चाहिये, जागरण करना चाहिये, जुट जाना चाहिये सत्कर्मों में।

सत्य बोलो। धर्म करो। वेद पढ़ो। माता को देवता मानो। पिता को देवता मानो। गुरु को देवता मानो। अतिथि को देवता मानो। संसार में जो अनिन्दनीय कर्म हैं, उनका आचरण करो। निन्दनीय काम न करो। जो हमारे सुचरित्र हैं उनका अनुकरण करो। कुचरित्र हो तो छोड़ दो। विश्व में जो हमारे से भी उच्च ज्ञान विचार के ऋषि मुनि जन हैं, वे जहां जैसा व्यवहार करते हों, वहां पर तुम भी वैसा ही बर्ताव करना। अन्यथा न करना। श्रद्धा से देना लेना। शक्ति अनुसार देना लेना। लज्जा से देना लेना। भय से देना लेना। विवेक विचार से देश काल पात्र देखकर देना लेना। यही आदेश है। यही उपदेश है। यही वेद का उपनिषद् रहस्य है। समस्त मानव के लिए यही अनुशासन है। इसी की उपासना हमको करनी चाहिये।

अध्यात्मवादी आत्मज्ञानी मानव के शास्ता गुरु हैं। दुष्ट दुर्जनों का शासक राजा है। लुक-छुप कर पाप करने वालों का शासक वैवस्वत यमराज है। वे माता-पिता अपने तथा सबके शत्रु हैं जो बालक बालिकाओं को सुशिक्षा नहीं देते। अशिक्षित सन्तति सभा में शोभा नहीं पाती, जैसे हंसों में बगुला। वे माता-पिता मित्र हैं जो बालक-बालिकाओं को धर्मशिक्षा देते हैं। धर्म शिक्षित बालक-बालिका सभा में वैसे ही सुशोभित होते हैं, जैसे हंसों में हंस शोभा पाते हैं। माता समस्त देवताओं की मूर्ति है। पिता समस्त देवताओं की मूर्ति है। गुरु समस्त देवताओं की मूर्ति है। अतिथि समस्त देवताओं की मूर्ति है।

गौमाता समस्त देवता और तीर्थों की मूर्ति हैं। पिता से माता दस गुना अधिक गौरवान्वित हैं। माता तीर्थ हैं, पिता तीर्थ हैं, बड़े भाई बड़ी बहन तीर्थ हैं, शास्त्र तीर्थ हैं, गुरु तीर्थ हैं, धर्मक्षेत्र भी तीर्थ हैं। तथा ऐसे और अनेक तीर्थ हैं। तीर्थ का अर्थ ऐसा है—संसार में फैले समस्त पातक को तर कर जो पारङ्गत है उसको तीर्थ कहा जाता है। अति दान से बाली को बन्धन पड़ा, अति गर्व से रावण मारा गया। अति रूप से सीता का हरण हुआ, अतः अति सर्वत्र वर्जित है। दृढ़ प्रतिज्ञ वीर के लिए सारी पृथ्वी घर आँगन की वेदिका हो जाती है, सारे सागर छोटी सी नाली हो जाते हैं। सातों पाताल एक छोटी सी थड़ी हो जाते हैं, सुमेरु पर्वत भी छोटा सा मिट्टी का टीवा वाल्मीक बन जाता है। सोने के फूल फुलाने वाली सोने की चिड़िया इस पृथ्वी का पालन वे तीन वीर नर कर सकते हैं। जो शूरवीर हैं, समस्त विद्या में पारङ्गत हैं, और जो सेवा धर्म को जान कर निष्काम सेवा करते हैं। सत्कर्म करते हुये ही सौ-सौ वर्षों पर्यन्त जीने की इच्छा रखनी चाहिए। कर्मभूमि में आये मानव का कर्म करने का ही अधिकार है, फलदाता परमात्मा है। सत्कर्म से ही सनक-जनक आदि देवर्षि ब्रह्मर्षि राजर्षि वैश्यर्षि शूद्रर्षि सिद्धि को प्राप्त हुए हैं। अनेक जन्मों के त्याग तपस्या से सिद्ध होकर परम गति को पाते हैं। केवल शरीर यात्रा का कर्म करने से किसी को कर्म दोष नहीं लगता। संसार के समस्त सत्कर्मों में कौशल प्राप्त करना भी योग है। समता का नाम भी योग है। योगस्थ होकर समस्त कर्म करना चाहिए। अकर्मण्य होकर रहने की अपेक्षा कुछ न कुछ अच्छा कर्म करना ही अच्छा है। तपस्वियों से ज्ञानियों से कर्मठों से भी योगी अधिक है। अतः योगी होना चाहिए। वामदेव और महादेव के प्रश्न उत्तरों का निबन्ध अमनस्क महायोग गोरक्षनाथने प्रकाशित किया। सतत चित्त को लय करने की प्रक्रिया लय योग है। हंस-हंसकर

यातायात करने वाली अजपा गायत्री का प्राणायाम विधान हठयोग है। मन्त्र का जप और मूर्ति का ध्यान करने का विधान मन्त्रयोग है। एवं जो समस्त चित्तवृत्तियों से रहित है वही राजयोग है। योगश्चत्त वृत्तिनिरोधः। योग से चित्त का व्याकरण से वाणी का, आयुर्वेद से शरीर का मल जिसने धो दिया, उस मुनि प्रवर पतञ्जलि को कर जोड़कर नमस्कार है। हे विशाल बुद्धि वाले, प्रफुल्ल कमल के दल के तुल्य नेत्रवाले वेदव्यास ! तुमको नमस्कार है। जिसने महाभारत रूपी तेल से पूर्ण ज्ञानमय दीपक प्रज्वलित किया। अट्ठारह पुराणों में वेद व्यास के दो ही वचन हैं, परोपकार पुण्य है, परपीड़ा पाप है। आधा श्लोक से वह तत्त्व कहेंगे जो कोटि-कोटि ग्रन्थों से कहा गया है—ब्रह्म सत्य है, जगत् मिथ्या है, जीव ब्रह्म ही है दूसरा नहीं। शिव के भीतर शक्ति हैं, शक्ति के भीतर शिव हैं। अन्तर नहीं समझना चाहिये, जैसे चन्द्रमा और चाँदनी भिन्न नहीं है। पाँच यम पाँच नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि यह अष्टाङ्ग योग है। आसन से समाधि पर्यन्त षडङ्ग योग है। मन्त्रयोग लययोग हठयोग राजयोग यह चतुरङ्ग योग है। सबको पूर्णता में अमनस्क महायोग है। परवंश सब कुछ दुःख है, अपने वंश में सब कुछ सुख है। संक्षेप में सुख दुःख का लक्षण इतना ही है। मन ही मनुष्य का बन्धन और मुक्ति का कारण है। विषयासक्त मन बन्धन का कारण है और निर्विषय मन मुक्ति का कारण है। विद्वान् को चाहिये कि कर्मसङ्गी अज्ञानियों का बुद्धिभेद न करे अपितु युक्तियुक्त रूप से स्वयं सदाचार में रह कर सबको भी सत् कर्म में लगावे, पथभ्रष्ट न करे। फूट डालो, राज करो न कहे। स्वधर्म निर्गुण भी हो श्रेयस्कर है, परन्तु परधर्म भली-भांति अनुष्ठित हो तो भी भयावह है और स्वधर्म में अटल रहकर मरना भी श्रेयस्कर है। प्राण जाय पर धर्म न जाई। मन्त्र तीर्थ द्विज देवता दैवज्ञ औषधि और गुरु में जिसकी जैसी भावना होती है, वैसा ही फल मिलता है।

हिन्दो ! जागृहि ! जागृहि !
जाग ! हिन्दु !! जाग !!!

तेरे घर में लगी आग

गौ माता के गले कट रहे हिन्दु कन्या हरी जाती हैं। देव मन्दिरों पर मस्जिद बने हैं। तीर्थ स्थलों पर मलिनता है। तू अभी भी सोता है। अमूल्य समय क्यों खोता है। जाग ! हिन्दु ! जाग !

स्वदेश भेष भूषा भाषा का नाश हो रहा। भोजन भजन भावना मलिन हो रहे। सभ्यता संस्कृति धर्म का लोप हो रहा। तू पड़ा पड़ा आज भी सो रहा। जाग ! हिन्दु ! जाग !

तेरे सभी देवी देवता अस्त्र शस्त्रों से सज्जित हैं। तेरे शत्रु आधुनिक अस्त्रों से भी सज्जित हैं। किन्तु खेद ! तू अब भी हाथ में दण्ड लेने से लज्जित है। अन्धेर खाते में मज्जित है। जाग ! हिन्दु! जाग !

आर्षी शिक्षा दीक्षा नहीं है। निष्पक्ष परीक्षा आत्मसमीक्षा नहीं है। त्याग तपस्या तितिक्षा नहीं है। मातृभूमि की रक्षा नहीं है। कहीं भी तेरी कक्षा नहीं है। हिन्दो ! जागृहि ! जागृहि !

तेरे अङ्ग में शिखा सूत्र नहीं हैं। माता पिता मरने पर भी त्रिलोदक देने वाले पुत्री पुत्र नहीं हैं। अपने गोत्र का पवित्र चरित्र

नहीं है। अपना चाल चलन भी तेरा मित्र नहीं है। अतः तू किसी की श्रद्धा का पात्र नहीं हैं। हिन्दो ! जागहि ! जागृहि !!!

देश में दुराचार भ्रष्टाचार चल रहे। दस्युदल के दैनिक हत्याकाण्डों से हाहाकार हो रहे। जन जीवन धनके रक्षक भी जब भक्षक हो रहे। शरणार्थी लोग तेरे द्वार पर रो रहे। अरे-कुम्भकर्ण। हिन्दु! तुम अब भी पडे सो रहे ? हिन्दो ! जागृहि !! जागृहि !!!

भाई-भाई में फूट डाल कर, हिन्दुत्व कोष में लूट डालकर पुरातत्व इतिहास में उथल पुथल का कालकूट डालकर, सस्ते मोल पर धर्मपरिवर्तन का छूट डालकर। विदेशी विजाति विधर्मी कूटनीति का जाल डालकर। भोले भाले हिन्दुओं का अकाल में ही काल कर रहे। अरे जीते ही मरे हिन्दुओ ! तुम अब भी पड़े सो रहे ?

हिन्दो ! जागृहि !! जागृहि !!!

उठो-उठावो सस्त्र हाथ में, धेनु धर्म की रक्षा हो। अभयदान दो भयभीतों को क्षात्र धर्म की शिक्षा हो। वर्णाश्रम का पालन कर लो, ऋषि मुनियों को दीक्षा लो। साधुसन्त सद्गृहस्थ मिलकर, हिन्दुस्थान की रक्षा हो ॥ हिन्दो ! जागृहि !! जागृहि !!!

उत्तिष्ठ जागृहि गृहित समस्त-शास्त्रः
क्षेप्यास्त्रमाभर भवन्तु जनांश्च मुस्थाः ।
शस्त्रेण रक्षित उदेति हि शास्त्रचिन्ता
शस्त्रास्त्रशास्त्ररहितो न हिताय हिन्दुः ॥

स्थूलाक्षर में **योगीनरहरिनाथः**

ॐ

विश्व-भाषा

विश्व-भाषा विश्व-भाषा भविष्येऽपि भविष्यति ।
वर्तमाने कृते यत्ने मातृभाषा भविष्यति ॥ १ ॥
कर्णेहत्य कृते यत्ने राष्ट्रभाषा भविष्यति ।
जागरूके जने जाते सद्योऽद्यैव भविष्यति ॥ २ ॥
स्वतन्त्रे भारते वर्षे राष्ट्रभाषास्तु संस्कृतम् ।
स्वतन्त्रे विश्वभवने गृहभाषास्तु संस्कृतम् ॥ ३ ॥
प्रतियवित प्रतिग्रामं प्रतिराज्यं पुरंप्रति ।
प्रत्येकं व्यवहारस्य मध्यमं संस्कृतं भवेत् ॥ ४ ॥
प्रचारका भवन्त्वेते सर्वे विद्यालयाः स्वयम् ।
पठने पाठने वादे जल्पे संवाद-पद्धतौ ॥ ५ ॥
शङ्कायाँ च समाधाने सत्प्रश्नोत्तरयोरापि ।
पत्राचारे विचारेऽपि सर्वत्र संस्कृतं हितम् ॥ ६ ॥
यष्टायष्टि-विधौ वापि मुष्टामुष्टि-विधौथा ।
स्वप्ने जागरणे याने विमाने निधने वने ॥ ७ ॥
श्मशाने रोदने गाने स्नाने पाने धनेऽधने ।
मानवानां समस्तानाँ चेष्टाः कष्टेऽपि संस्कृते ॥ ८ ॥
पितृभाषा मातृभाषा गुरुभाषास्तु संस्कृतम् ।
सखिभाषा सखीभाषा शत्रुभाषापि संस्कृतम् ॥ ९ ॥

बालभाषा वृद्धभाषा युवभाषास्तु संस्कृतम् ।
पशुपक्षिमृगादीनामस्तु सम्बोधनं सदा ॥ १० ॥
सरले संस्कृते शुद्धं क्रुद्धोपि संस्कृतं वदेत् ।
विद्यार्थिनो अध्यापकाश्च प्रवर्तन्ताँ पुराखिलाः ॥ ११ ॥
मातरः पितरश्चैव संस्कृतज्ञास्तथाऽपरे ।
अमृतस्याऽखिलाः पुत्रा अमृता वागियंपितुः ॥ १२ ॥
महिषासुरसंहारे दुर्गाया गर्जना श्रुता ।
त्रिपुरासुरसहारे हरस्य गर्जना ॥ १३ ॥
बालिरावण-संहारे रामस्य गर्जनाः श्रुताः ।
कृष्णस्य कंससंहारे संस्कृतेनंव गर्ज्जनाः ॥ १४ ॥
पाठशाला-यज्ञशाला-धर्मशालासु संस्कृतम् ।
गोश्मला-मल्लशालासु संस्कृतं बलवच्चलेत् ॥ १५ ॥
जल-स्थाने जलं वाच्यं स्थल-स्थाने स्थलं तथा ।
अनुस्वार-विसर्गाभ्यां प्राकृतं संस्कृतं भवेत् ॥ १६ ॥
शुद्धाशुद्धविचारस्तु प्रारम्भे नो विधीयताम् ।
असत्ये वर्त्मनि स्थित्वा ततः सत्यं समोहते ॥ १७ ॥
लोती लोती वदन्बालो रोटी रोटी वदेत् स्वयम् ।
यथा तथा प्रवर्तेरन् प्रथमं बालकाः पथि ॥ १८ ॥
प्रवर्तनीया मार्मेते मार्गदर्शिजनैः सदा ।
संस्कृतं देवतावाणी, ऋषिभाषा च संस्कृतम् । १९ ।
देवर्षि सन्ततीनाँ च भाषा संस्कृतमेव सा ।
ऋषीणाँ देवतानाञ्च सन्ततिः सकला नराः ॥ २० ॥
मानवानाँ समस्तानां मातृभाषास्ति संस्कृतम् ।
भाषाया एकताद्वारा जायते भावनैकता ॥ २१ ॥

भावना सभ्यताहेतुः संस्कृतिः सभ्यतोद्भवा ।
धर्मोऽयं संस्कृतेरात्मा धर्मे विश्वं प्रतिष्ठितम् ॥ २२ ॥

संस्कृतेन विना न स्युर्धर्म-संस्कृति-सभ्यताः ।
विश्वस्थिति-कृते विश्वे विश्वभाषास्तु संस्कृतम् । ॥ २३ ॥

काश्यां श्रीशङ्कराचार्यकाशिराज-समागमे ।
श्रीरामनगरे रम्ये नूहरेः पद्यभाषणम् ॥ २४ ॥

गङ्गा मङ्गलकारिणी सुरगणैः श्रीविश्वनाथस्तथा ।
विद्वद्न्दवृदञ्चदर्कसदृशं विश्वान्धकारापहम् ॥ २५ ॥
विन्ध्याद्रौ निवसत्यशेष-कुशलं कर्तुञ्च विन्ध्येश्वरी ।

विश्वं संस्कृत-भाषया मिलतु मे प्रस्तावना प्रार्थना ॥ २६ ॥
मातृभाषा मुखेनैव [संस्कृतं ज्ञायतेऽखिलैः ।

(२०४४)

नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते

दुस्शासनप्रदत्त चतुर्थ उपाय द्वारा प्रविष्ट सभी प्रकार के समाज कुष्ठों को हटाकर वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था द्वारा पिण्डब्रह्माण्ड समाजस्य में अष्टाशीतिसहस्र ऋषि मुनि जन द्वारा प्रवर्तित आदर्श का प्रतिपालन करना और समाज के सभी अङ्गों से करवाना ऋषि मुनि स्थानीय साधु-सन्त समाज का पावन व्रत है ।

अन्ये कृतयुगे धर्मास्त्रेतायां द्वापरे परे ।
अन्ये कलियुगे धर्मा युगह्रासानुसारतः ॥
अननी यवनैः क्रान्ता हिन्दवो विन्ध्यामाषिशन् ।
बलिना वेदमार्गोऽयं कलिना कवलीकृतः ॥
सर्वनाशे समुत्पन्ने, अर्धं त्यजति पण्डितः ।
अर्धेन कुरुते न्यार्यं सर्वनाशे हि दुस्सहः ॥

आपत्तकाले मर्यादा नास्ति। न स्त्रीशूद्रो वेदमधीयाताम् । स्त्रीशूद्रद्विजबन्धूनां त्रयी न श्रुतिगोचरा। इत्यादि आपत्तिकालिक अनुकल्पो को हेतु प्रबोधपूर्वक निरस्त कर आदिक वैदिक-कलिः शयानो भवति। उज्जिहानस्तु द्वापरः। उत्तिशंस्त्रेता भवति। कृतं सम्पद्यते चरन्। तस्माच्चरैव चरैवेति। वैदिकी युगचर्या। यथेमां वाचं कल्याणोमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च। विराजो विश्वस्यमुखङ किमस्यासीत्? किम् बाहू? किमूरू? पादावुच्येते? ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः। ऊरूतदस्य यद् वैश्यः पदभ्याँ शूद्रोऽअजायत। आचाण्डाल मनुष्याणां समं शास्त्रप्रयोजनम्। मनुष्यकं चैकविधम्। एकवर्णमिदं

विश्वं कर्मभिर्वर्णतां गतम्। चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः। आचारः प्रथमो धर्मः। आचाहीनं न पुनन्ति वेदाः। आचारादुच्चता ख्याता, आचारान्नीचता तथा। यादृश भुज्यते चान्नं तादृशं जायते मनः। अट्टारशुद्धो सत्त्वशुद्धिः सत्त्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः। स्मृति भ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति। बुद्धिं लुम्पतियद् द्रव्यं मादकं तत् प्रचक्षते। विवेक भ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः। माँ स भक्षयिताऽमुत्र यस्य माँसमिहाद्म्यहम्। एतन्मांसस्य मांसत्वं प्रवदन्ति मनीषिणः। अनुमन्ता बिशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी। संस्कर्ता चौपहर्ता च खादकस्चाष्ट घातकाः। नाकृत्वा प्राणिनां हिंसा मांसमुत्पद्यते कचित्। मत्स्यादः सर्वमांसादः। मांसादिनि कुतो दया? दया धर्मस्य मूलं हि दयाहीना निसाचराः। त्यागेनैकेऽमृतत्वमानशुः। त्यागांच्छान्तिरनन्तरम्। अशान्तस्य कुतः सुखम्? सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम्। एतद् विद्यात् समासेन लक्षणं सुखदुःखयोः। सुखस्य मूलं धर्मः। धर्मस्य मूलमर्थः। अर्थस्य मूलं राज्यम्। राज्यमूलमिन्द्रियजयः। इन्द्रियजस्य मूलं विनयः। विनयस्य मूलं वृद्धोपसेवा। वृद्धसेवया विज्ञानं भवति। विद्या ज्ञान निगद्यते। विद्यमाऽमृतमश्नुते। विशिष्टं ज्ञानं विज्ञानम्। नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।

संक्षिप्त शब्दार्थ :—

सत्ययुग में अन्य धर्म, त्रेतायुग में अन्य धर्म, द्वापर युग में अन्य धर्म, कलियुग में अन्य धर्म, युग के ह्रासके अनुसार होते हैं। मूल अचल रहता है, व्यवहार पक्ष में थोड़ा बहुत अन्तर पड़ता है। भूमि यवनों से आक्रांत हुई तो हिन्दु लोग विन्ध्याचल में घुसे। बली कलि कालने यह वेद मार्ग कवलित कर दिया। सर्वनाश होने लगे तो पण्डित को चाहिए कि आधा त्याग दे, आधा से काम चलावे। सर्व नाश तो दुस्सह है। आपत्काल में मर्यादा नहीं रहती। स्त्री शूद्र वेद न पढ़े। स्त्रीशूद्र द्विज बन्धुवों के कान में वेदका शब्द न पड़े। इत्यादि

आपतकालिक अनुकल्पों को हेतु बता कर निरस्त कर आदिम वैदिक सिद्धान्त का बोध कराना अनिवार्य है सोनेवाला कलियुग होता है। उठने की इच्छावाला द्वापर युग होता है। उठनेवाला त्रेता युग होता है। गतिशील सत्ययुग होता है। अतः प्रगतिशील होना चाहिए। वैदिक युगचर्या है। ईश्वर और देवता केवल देते हैं, किसी से कुछ लेते नहीं है। जैसे इस कल्याणी वेदवाणी को समस्त जनता के लिए चारों और बोलता हूं ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र चारण आदि मानव परिवार के लिए प्रदान करता हूं विराट विश्व का मुख क्या था? हाथ क्या थे? पेट क्या था? पाव क्या थे? इन प्रश्नों को उत्तर—ब्राह्मण मुख था। क्षत्रिय बाहू थे। वैश्व पेट था। शूद्र पांव थे। एक शरीर के चारों अङ्ग एक दूसरे से अभिन्न रूप से जुटे हैं। चाण्डाल से लेकर समस्त मनुष्यों को शास्त्र का समान प्रयोजन है। चौरासी लाख प्राणियों की भाँति मनुष्य जाति भी एक ही प्रकार की है। एक वर्ण का यह विश्व कर्मानुसार चारों वर्णों में विभक्त हुआ। गुण और कर्म के विभाग से एक वर्ण के विश्व में चातुर्वर्ण्य व्यवस्था की गई है। विश्व में आचार ही प्रथम है। आचार हीन को चारों वेद भी पवित्र नहीं कर सकते। आचार से उच्चता और आचार से ही नीचता होती है। सदाचार से उच्चता कदाचार से नीचता होती है। जैसा अन्न वैसा मन। आहार शुद्ध होने से सत्व शुद्ध होता है, सत्व शुद्ध होने से स्मृति स्थिर होती है 'स्मृति के भ्रष्ट होने से बुद्धिका नाश होता है। बुद्धि के नष्ट होते ही सर्वनाश होता है, जो द्रव्य बुद्धि का नाश करता है, उसको मद या मादक कहते हैं। विवेक से पतित का शतमुख पतन होता है। मुझे वह वैसे ही मार कर खायेगा जैसे मारकर खायेगा जैसे मारकर हमने यहा इस को खाया है—मां मुझको स वह इस अर्थ में मांस बना है। एक जीव की हत्या के पात को आठ जने होते हैं—मारने की अनुमति देने वाला एक मारनेवाला दो अङ्ग भङ्ग करने वाला ३ मांस खरीदनेवाला ४ बेचने

वाला ५ पकानेवाला ६ परोसनेवाला ७ और खाने वाला ८ सबसे बड़ा पात की खानेवाला होता है हिंसा दुःखद है। प्राणाकी हिंसा किये बिना कहीं भी माँस नही मिलता। मांस की खेती नहीं होती। क्योंकि मछली खाने वाला समस्त जीव जन्तुओं का मांस खाता है। मछलो सबका माँस खाती है। मांस खाने वाले में कहां दया? दया धर्म का मूल है। मानवता ही धर्म है। दयाहीन मानव ही राक्षस है। मांस त्याग आदि त्याग से ही अमृत पद मोक्ष मिलता हैं, त्याग से ही शान्ति मिलती है। अशान्त को कहां सुख? परवश सब कुछ दुःख है, अपने वशमें सब कुछ सुख है। सुख-दुःख का संक्षिप्त लक्षण इतना ही है। सुख का मूल धर्म है। धर्म का मूल अर्थ है। अर्थ का मूल राज्य है। राज्य का मूल इन्द्रियों का विजय है। इन्द्रियजय का मूल विनय का मूल वृद्धजनों की सेवा है। ज्ञानवयोवृद्धजनों की सेवा से विशिष्ट ज्ञान होता है। विद्याको ही ज्ञान विज्ञान कहते हैं। विद्या से अमृत मिलता है। विद्या ज्ञान एक हैं। ज्ञान के समान पवित्र वस्तु यहां नहीं है।

ॐ

ओ ! हिन्दू !! जाग !!!

सोने का समय नहीं है। रोने का समय भी नहीं है। असूल्य काल को खोने का समय भी नहीं है। का हानिः समयच्युतिः ! समय पड़े पर चूक गये फिर पछिताये क्या होता है?

एक समय वो भी था, जब आत्मा खलु विश्वमूलम् ! वेदोऽखिलो धर्ममूलम्। कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। सर्वे भवन्तु सुखिनः। आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।

कहते हुए अट्ठासी हजार ऋषि मुनिजन विश्वव्यापक यात्रा कर सारे संसार को वैदिक मानव धर्म का उपदेश देते थे। जिससे सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा, कहा जाता था। वसुधैव कुटुम्बकम् था। स्वदेशो भुवनत्रयम् था। सर्वंखल्विदं ब्रह्म, था। तत्त्वमसि का उपदेश देश विदेश में था। उस समय धर्म की परिभाषा थी :—

धारणं पोषणं धर्मः। धारणाद् धर्ममित्याहुर्धर्मो धारयते प्रजाः। यत् स्याद् धारणसंयुक्तं स धर्म इति निश्चयः। वेदप्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्तद्विपर्ययः। सद्भिराचरितः सम्यङ् नित्यमद्वेषरागिभिः। हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्तं निबोधत। श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः। एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद् धर्मस्य लक्षणम्। सत्यं धर्मो दया धर्मस्तपस्त्यागस्तथैव च। चतुष्पात् सकलो धर्मः। आचारः प्रथमो धर्मः। आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः। सदाचारः सतां धर्मः। धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः। धीर्विद्या सत्यम-

क्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्। धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा। यो धर्मं बाधते धर्मो न स धर्म उदाहृतः। यस्मिन् यथावर्तते यो मनुष्यस्तस्मिंस्तथा वर्तितव्यं स धर्मः। मायाचारो माययावर्तितव्यः साध्वाचारः साधुना प्रत्युपेयः। एष धर्मः सनातनः। श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वैस्मृतिः। वेदव्याख्या मनुस्मृतिः। वेदभाष्यं मनुस्मृतिः। प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न विद्यते। एतं विदन्ति वेदेन तस्माद् वेदस्य वेदता। यस्य विश्वसितं वेदा यो वेदेभ्योऽखिलं जगत्। निर्ममे तमहं वन्दे विद्यातीर्थं महेश्वरम्। ज्ञान महेश्वरादिच्छेत्।

हिन्दु धर्म की परिभाषा यह थी। हिन्दु धर्म का स्वरूप यह था। इस हिन्दू धर्म में कोई सङ्कीर्णता नहीं है। कोई किसी का विरोध नहीं है। कोई एकाङ्गिता नहीं है। कोई अङ्गभङ्ग नहीं है। कोई भी एकदेशिता नहीं है। किसी के विपरीत नहीं है। किसी का हानिकारक नहीं है।

ॐ 卐 गौः श्रीः

ॐ नमः सिद्धम्! श्रीगणेशायनमः! श्रीसरस्वत्यै नमः!
अ आ आ ३! इ ई ई ३! उ ऊ ऊ ३! ऋ ॠ ॠ ३!
ऌ ॡ ॡ ३! ए ऐ ओ औ अं अः! २१ स्वराः!
क ख ग घ ङ! च छ ज झ ञ! ट ठ ड ढ ण! त थ द ध न।
प फ ब भ म! य र ल व ल! श ष स ह! क्ष त्र ज्ञ! यँ रँ लँ वँ
४१ व्यञ्जनानि।
कॅ खॅ पॅ फ! पलिक्कनी! चख्खनतुः! अग्गिनः! जघ्घनुः!
कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं
भं मं यं रं लं वं त्रं लं शं षं सं हं क्षं त्रं ज्ञं।

क का कि की कु कू कृ कॄ क्लृ के कै को कौ कं कः।
एवं ख खा आदि! ङ ङा! ज ञा! ण णा!
य या! व वा। क्ष क्षा। त्र त्रा! ज्ञ ज्ञा आदि!
पूर्ण वर्णमाला

शब्दसृष्टिः—६४ वर्षों की वर्णमाला में २१ स्वर २५ स्पर्श ८ यादि ४ यम १ अनुस्वार १ विसर्ग १ जिह्वामूलीय १ उपध्मानीय १ दुःस्पृष्ट ल ३ प्लुत लृकार सब मिलाकर ६४, वर्ण पूर्ण होते हैं। शब्द की उत्पत्ति :—आत्मा बुद्धि से मिलकर पदार्थों का नाम लेने के लिए मन को नियुक्त करता है। मन जठणाग्नि प्राठावायु को कहता है। प्राणवायु हृदय से ऊपर को चलता हुआ मन्द्र स्वर उत्पन्न करता है। मन्द् स्वर आठों स्थानों में टक्कर खाता हुआ मुख नाणीका से बाहर निकलता है। बैखरी वाणी शब्द की झड़ी लगाकर विश्व वाङमय का रूप धारण करती है। कान से सुना जाने वाला बुद्धि से ग्राह्य मुख से प्रयोग किया गया आकाश का गुण आकाश देश में शब्द होता है। आकाश में वायु द्वारा प्रकट शरीर से निकलता हुआ मुख में आकर नाद अभिव्यक्त होता है। उर सिर कण्ठ तालु दन्त मूर्धा ओष्ठ नासिका इन स्थानों में विभक्त होकर शब्द चौसठ वर्णों की माला के रूप में परिणत होता है। एक एक शब्द शुद्ध रूप से सम्यक् प्रकार से जानकर विधिवत् प्रयोग करने से यह लोक परलोक में कामधेनु के समान समस्त कामनायें पूर्ण करता है। ज्ञानी जन उस पवित्र अक्षर पर ब्रह्म को हृदय गुहा में सम्यक् विधि से आराधित करते हैं। वह शब्द अभ्युदय और निश्रेयस के साथ प्रयोग करने वालों को जुटा देता है। वर्णज्ञान बाणी का विषय है। जिसमें ब्रह्म तत्व बोधक ब्रह्म (वेद) है। उसको तथा अभीष्ट पदार्थों को जानन के लिये एवं शीघ्रता के लिए वर्णमाला का उपदेश किया जाता है। अक्षय ब्रह्म व्यापक अक्षर रूप में अथवा वर्ण के रूप में उपदेश किया जाता है। वही यह अक्षर समाम्नाय वाक् समाम्नाय पुष्पित फालित चन्द्र तारा तुल्य प्रतिमण्डित है। इस वेद ब्रह्म राशी को जानना चाहिये। इसको जानने से समस्त वेद पढ़ने का पुण्य प्राप्त होता है।

शब्दकोषः

देहली—दिल्ली, डेली
वाराणसी—वनारसी, वनारस
गिरिजापुरी—मिर्जापुर
गाधिपुरम्—गाजियावाद
बदरीपुरम्—बदरीपुर, बदरपुर
मिहिरावली—महरोली
अयोध्या—फैजावाद
पाटलीपुत्रः—पटना
उड्डीसाः—उडिसा
गोहट्टी—गोहाटी
शिलागाढम्—शिलीगुडी
डमरुगाढम्—डिब्रूगड
महीसुरः—मैसूर
कोलाम्बा—कोलम्बो
कदली—कद्री
मुक्तापुरम्—पुत्तूरु
पाण्डुचेटी—पाण्डिचेरी
पुण्यपत्तनम्—पुना—पुणे
बालुकेश्वरः—बालकेसर
नासिका—नासिक
सिवमेरुः—सिवनेर
सौराष्ट्रम्—सोरठ

प्रयागः—प्रयाग, इलाहाबाद
मुद्गलशरणम्—मुगलसराय
गाधिपुरम्—गाजीपुर
पालदुर्गम—तुगलकाबाद
कतुमेरुः—कुतुबमिनार
कालिका—कालका
कालिकापुरम्—कलकत्ता
वैशाली—वसाड
आसाम—असम
शिलाङ्गम्—सिलाङ्ग
पूर्णिमा—पूर्निया
मन्दराचलः—मद्रास
कर्णाटकः—कन्नड
मङ्गलापुरम्—मङ्गलूर
विष्ठलम्—विटला
मधुरा—मदुरै
अम्बानगरम्—अहमदनगर
मुम्बापुरम्—बम्बै
ताम्रकुट्टाः—ताम्बाकाटा
स्थाने—ठाणे
गान्धिपुरम्—अहमदावाद
अर्जुनगाढम्—जूनागढ़

गिरिनगरम्—गिरनार
हरिहरपुरम्—हाजीपुर
लक्ष्मणपुरम्—लखनौ
मौग्दल्यपुरम—मुरादावाद
मुनिपुरम्—मुजफरपुर
द्रोणाश्रमः—देहरादून
भीमह्रदः—भीमगोडा
कान्यकुब्जः—कन्नोज
पाणिप्रस्थः—पानीपत
कर्णालयः—करनाल
पृथूदकम्—पिहोवा
यमुनापुरम्—फरीदावाद
पराशरपुरम्—फिरोजपुर
जालाम्भः—जेलम
काश्मीराः—कस्मीर
भद्रवाटः—भद्रवाल
द्विगर्ताः—डोगरा
मार्गः—रोड, सड़क
निर्णयः—फैसला
अवधि—म्याद्
पवित्रम्—पाक
सत्यार्थी—हकदार
आदेश—हुकुम
इच्छा—अर्मान
आधिपत्यम्—अमल
सैनिकः—सिपाही
कर्मचारी—कारिन्दा

शोणपुरम्—सोनपुर
कुशनगरम्—कुसीनारा
कर्णपुरम्—कानपुर
चमारन्यम्—चम्पारन्यम्
सारङ्गपुरम्—सहारनपुर
राजबाला—रायवाला
रुद्री—रुडकी
गाढमुक्तेश्वरः—गढ़मुक्तेश्वर
शोणप्रस्थः—सोनीपत
जीवन्ती—जीन्द
रोहितकः—रोहतक
अग्रसेनपुरम्—आगरा
जावालिपुरम्—जलालावाद
जम्बूद्वीपम्—जम्मू
कष्टवाटः—कष्टवाल
पुच्छम्—पुन्छ
त्रिगर्तः—तिङ्गर
न्यायालयः—अदालत
तिथि—तारीख
उत्कोचः—घूस
सत्यम्—हक
अधिकृतः—हाकिम
अध्यादेश—फर्मान
अधिकारः—हक
अधिपतिः—अमाली
राजपुरुषः—पुलिस
आपणम्—दुकान

विपणी—बाजार
घरगृहम्—मकान
जन्तुः—जानवर
लेखाजोखा—हिसाब किताव
पत्रम्—पेपर
प्रपत्रम्—पर्चा
पृष्ठम्—सफा
पद्म—लब्ज
लेख्यम्—खाता
सञ्चेता—वहीदार
ताम्बूलिकः—तमोली
शिक्षकः—माष्टर
प्राचार्यः—डीन
प्रतिनिधिः—वारिस
वणिक्—वणिश्रा
व्यापारः—सौदा
विक्रयः—वेचना
तोलनम्—तोल
अवमूल्यनम्—मोलघटाना
मुद्राः—सिक्का
स्वर्णम्—सोना
ताम्रम्—तामा
सीसम्—सीसा
कांस्यम्—कांसा
धातुः—धाउ
लाक्षा—लाख
मधु—शहद

पण्यम्—व्यापार
हैमन्ती—रब्बी
जीव—जान
पुस्तकम्—किताब
पत्रिका—अखबार
पत्री—पोस्टकार्ड
पंक्तिः—लाइन
वर्णः—वर्ड
सञ्चिका—वही
सचिवः—मुन्सी
विद्यार्थी—ष्टुडेण्ट
प्र०अ०—हेडमास्टर
प्राध्यापकः—प्रोफेसर
श्रेष्ठी—सेठ
कृषि—खेती
क्रयः—किन्ना
मूल्यम्—मोल
मूल्याङ्कनम्—मोलकरना
महर्घता—महंगी
मुद्रा—मोहर
रजतम्—चाँदी
लोहः—लोहा
रङ्गः—राङ्
पित्तलम्—पीतल
किट्टम—कीट
माक्षिकम—मोम
प्रेषः—प्रेस

सेवकः—सर्वेण्ट
मनुष्यः—मैन
महिला—लेडी
पिता—बाप
भगिनी—बहिन
मातुलः—मामा
पितामही—दादी
सम्बन्धी—सम्धी
श्वशुरः—ससुर
मात्रा—मात्रा
विसर्गः—विसर्ग
चन्द्रबिन्दुः—चन्द्रविन्दु
अल्पविरामः—अल्पविराम
अर्धविरामः—अर्धविराम
निर्देशः—डेस
पत्र ा—पाना
ज्ञानम्—ज्ञान
मेधा—मेधा
मन्त्रः—मन्त्र
ऋद्धिः—ऋद्धि
शुद्धिः—शुद्धि
हिमम्—हिम
वात्या—आँधी
वर्षाः—वर्षा
आकाशः—आकास
अग्निः—आग
स्थलम्—थल

सेवा—सर्विस
मन्त्री—मिनिस्टर
माता—माँ
भ्राता—भाई
पितृव्यः—चाचा
मातुलानी—मामी
पितामहः—दादा
श्वश्रूः—सास
अक्षरम्—अच्छर
बिन्दुः—विन्दी
अनुस्वारः—अनुस्वार
विरामः—विराम
पूर्णविरामः—पूर्णविराम
कोष्ठम्—कोष्ठ
प्रघट्टः—पैरा
विद्या—विद्या
बोधः—बोध
मेधावी—मेधावी
सिद्धिः—सिद्धि
बुद्धिः—बुद्धि
पानीयम्—पानी
करकाः—ओला
धूली—धूल
वारिदाः—वादल
वायुः—वायु
जलम —जल
पृथ्वी—पृथिवी

मृत्ती माटी
इष्टकाः ईंटा
शिलापिष्टम् सिमेण्ट
वज्रलेपः वज्रलेप
वज्रम्-वज्र
भित्तिः भींत
कलशः कलस
हलम् हल
युगम् जुवा
हली - हली
बीजम् — बिज
अंकुराः—अकुर
बालिकाः—बाली
फलम्—फल
तुषी—तूडो
शकटी—सणड
कीलम्—कील
गोष्टम्—गोठ
तृणम्—तिरन
खलम्—खलीहान
सीमितम्—लिमिट
अनिवार्यम्—इमर्जेन्सी
साचिव्यं—सिक्रेट
मान्यतरः—माष्टर
स्वसारः—सिष्टर
स्वेदधरः—स्वीटर
रेखाकरः—राइटर
करग्रहः—कण्डक्टर

प्रस्तरः पत्थर
चूर्णम् चून
बालुकाः बालू
कुट्टिमम् फर्स

छत्रम छत
ध्वजः धजा
फालम् फाली
अनड्वहौ बयल
कृषि—खेती
सीता—सिया
प्रसवाः—पसाया
नलम्—नल
तुष्म्—भुस
जालम्—जाल
स्यूतानि—बोरा
रज्जुः—रस्सी
गोचरः— गौचरः
घासम्—घास
अन्तिमेत्थम् — अण्टिमेटम्
समितिः—समिति
सचिवः—सेक्रेटरी
कोष्ठम्—क्वाटर
मानवः—मिष्टर
मंत्री — मिनिष्टर
फट्करः—फाइटर
दुहितरः—घोखतर
मरुतरः—मोटर

बथः—बस
पत्रम्—पेपर
दुर्योधनः—दुरोधन
खट्वापादः—खाटपाया
गिलाशः—गिलास
घटाः—घडा
मार्जनी—झाड़
चमसाः—चमचा
झर्झरः—झाझर
अग्निः—आग
कोलाः—कोयला
तैलम्—तेल
पूततैलम्—पेट्रोल
अयनम्—लाइन
दक्षिणायनम
भीष्मः—भीखम
कर्णः—करण
भीमः—भिम
नकुलः—नकुल
द्रोपदीः—दुरपता
पाण्डवाः—पण्डुवा
कौरवाः—कुरवा
दुश्शासनः —दुशासन
विराटनगरम्—वैराठ
अगरापरब—
आदित्यमेरु—आमेर

भाटकम्—भाडा
पुस्तकम्—बुक
खट्टा—खाट
स्थाली—थाली
करोडी—कटोरी
कलशः—कलस
कूर्ची—कूची
कटाहः—कडाई
अम्बरीषः—भट्टी
अङ्गारः— अंगार
प्रस्तरकोला-पत्थर कोयल।
मृतैलम्—मिट्टी तेल
गाढतैलम—डीजल
उत्तरायणम्—
महाभारतम्
द्रोणः—इन
युधिष्ठिर—पुदष्टर
अर्जुनः—अर्जन
सहदेवः—सहदेव
कुन्तो—कुन्ता
कुरुक्षेत्रम—कुरुक्षेत्र
धृतराष्ट्रः—धितराष्टर
गुरुग्रामः—गुडगावाँ
अष्टादशपर्वाणि
गान्धारी—गन्धारी
अजमेरुः—आजमेर

गजमेरुः—गजमेर
चित्रदुर्गम्—चित्तोड
भिल्लवाटः—भीलवाडा
भिल्लवाटः—भीलवाडा
व्यावरः—व्याबर
ज्ञयसल्लमेरुः—जैसलमेर
स्फीतपुरम्—फतेपुर
विसाधुः—विसाउ
मकरायणम्—मकराना
जलन्धरपुरम् जालौर
भद्रेश्वरः—भद्रेस्या
मन्दोदरीपुरम्—मण्डोर
योधायनम्—जोधाणा
चटकाकूटम्—चिडियाटोंक
कमण्डलु—कमण्डल
वेष—भूषा
भाषा—भाषा
भोजनम्—भोजन
भाज्जनम्—भज्जन
अञ्जनम—अञ्जन
सजजन—सज्जन
कज्जलम्—कज्जलम
सज्जनी—सजनी
काण्डिका—कण्डिका
कोदण्ड—कोडण्ड
फचाः—फच

कुम्भलमेरुः—कुमलमेर
मेरुवाट—मेवाड
उदयपुरम्—उदैपुर
उदयपूरम—उदैपुरम
विक्रमनगरम्—बिकानेर
हनुमनागादम्—हनुमानगढ़
चरु—चूरू
सामरः—साभर
नागपुरम—नागोर
योधपुरम्—जोधपुर
कदम्बखण्डी - कदमकण्डी
पालासनी—पालासनी
रक्तनाला - रातानाडा
निम्बधात्रा—निमाई
दण्ड—डण्डा
भूषा—भूषा
भजनम्—भजन
भाजनम्—भाजन
रज्जनम्—रज्जन
मञ्जनम्—मज्जन
दुर्जनः—दुर्जन
स्वजनः—स्वजन
कुण्डम्—कुण्ड
कूष्माण्डम्—कुस्माण्ड
काण्डाः—काण्ड
काचः—काच

कच्चुकम्—कज्जुक
काच्चनम्—कच्चन
कानकम्—कानक
कुसाल—कम्हार
कम्बलः—कम्पल
कोविदः—कोविद
कुबेरः—कुबेर
कुमारी—कुमारी
कुमारः—कुमार
कौशाम्बी—कौशाम्बी
कङ्गः—कङ्क
किङ्कणी—किंकिणी
करण्डः—करण्ड
करणम्—करण
कुरमः—कुरर
किस्किन्धाः—किस्फिन्धा
कला वक्ष—कल्पवृक्ष
कल्पलता—कायकल्पः—कायाकल्प
कायाज्ञनम्—कायकज्ञन
कामना—कामना
कामः—काम
कार्मम—कौर्म
कर्मठः—कर्मठ
कर्मबीरः—कर्मवीर
कौलिकः—कौलिक
कोलीः—कोली
कर्णाटक—कर्णाटक

काच्चनम्—कच्जुक
कनक—कनकम्
कुलाल—कुमाल
कुम्भः—कुम्भ
कोविदारः—कचनार
कोर्दण्ड—दोईण्ड
कौबेरी—कौबेरी
कौमारी—कौमारी
कौमारम्—कौमार
कलिलम्—कलिल
कङ्कणः—कङ्कन
कोङ्कणः—कोकन
किरणः—किरन
कारणम्—कारण
कारण्डः—कारण्ड
कम्पः—कम्प
कल्पवृक्षः—कल्पतरु
कल्पेपापयः—कल्पपादक,
कायाकञ्चनम्—कायकञ्चन
कामिनी—कामिनी
कूर्मः—कुर्म—कुर्मी
कार्मणम्—कार्मण
कर्मवीरः—कर्मवीर
कौलः—कौल
कोलः—कोल
कोलाम्बा—कोलाम्बो
केरलः—केरल

केकयदेशः—काकेशिशा	केकयः—केकयी
कोसलः—कोसल	कोसलः—कोसल
कौशलः—कौशल	कौशल्या—कौशल्या
कोमलम्—कोमल	कमलम्—कमल
कामलः—कामल	कृमिः—क्रमि—कीट
कृमिला—कृमिला	कृष्णः—कृष्ण—काला
कृष्णम्—कृष्ण	कृष्णा—कृष्णा
कृत्रिमम्—कृत्रिम	कृतकः—कृतक
कृत्तिका—कृत्तिका	कार्त्तिकः—कार्त्तिक
कार्पटी—कार्पटी	कपटी—कपटी
कपटः—कपट	कुषटः—कुपट
कूपीटयोनि—कूपीटयोनि	कृष्णव्रत्मा—कृष्णव्रत्मा
कुक्षिः—कोख	कक्षा—कक्षा
कक्षः—कक्षा	कृपणः—कृपन
कृपाणः—कृपान	कृपानी—कृपाणी
कुबिन्दः—कुबिन्द	कुसीदः—कुसीद
कुशः—कुश	कोशः—कोश
कौशम्—कौश	कीरः—कीर
कूटम्—कूट	कौटम्—कौट
कौटल्यः—कौटल्य	कुशीलः—कुशील
कुशीलवः—कुशोलव	कलविङ्कः—कलबिङ्क
कलङ्की—क ।ङ्की	कलङ्क—कलंकः
कल्कः—कल्क	
कष्मलम्—कष्मल	कल्मषः—कल्मष
कल्माषः—कल्माष	कणः—कन
कणश—कणाश	काणिकी—काणिकी

किणाः—किण	किणाङ्क—किणाङ्क
किञ्जल्कः—किञ्जल्क	केशरः—केशर
केसरम्—केसर	केसरी—केसरी
कैसरम्—कंसर	केतकम्—केतक
केतकी—केतका	केतुः—केतु
कौतुकम्—कौतुक	कुतर्कः—कुतर्क
कौतुकी—कौतुकी	कौतूहलम्—कौतुहल
कुलम्—कल	कुलीन—कुलीन
कुलीनता—कुलीनता	कौलीन्यम्—कौलीन्य
कीलकम्—कीलक	कवचम्—कवच
कपालः—कपाल	कपाली—कपाली
कापालिकः—कापालिक	कपालिनी—कपालिनी
कलालः—कलाल	कलाली—कलाली
कमली—कमली	कम्बली—कम्बली
कुनखी—कुनखी	कुम्भकर्णः—कम्भकरण
कुदारः—कुदार	कुब्जः—कुब्ज
कुब्जा—कुब्जा	कुञ्जः—कुञ्ज
कमठ—कमठ	कमठी—कमठी
कच्छपः—कछुवा	कच्छपी—कछुई
कच्छः—कच्छा	कच्छाटः—कछाड
कच्छभुजः—कछभुज	कटकः—कटक
कच्छुः—कौछ	कद्रुः—कद्रु
काद्रवेयः—काद्रवेय	कालः—काल
कालिमा—कालिमा	कुण्डी—कुण्डी
कुली—कुली	कुक्कुरः—कुत्ता
कुक्कुटः—कुक्कुड	कुण्डलम्—कुण्डल
कुण्डली—कुण्डली	कुण्डला—कुण्डला

कुण्डिका—कुण्डिका
कौण्डियः—कौडिन्य
कौपम्—कौप
कदली—केला
कन्दः—कन्द
कपर्दः—कपर्द
कपर्दी—कवड्डी
काश्यपः—काश्यप
कश्यपी—काश्यपी
कालिका—कालिका
कत्यः—कत्य
कापिलः—कपिल
काम्पिल्यः—काम्पिल्य
कणादः—कणाद
काणादिः—कूणादि
कौणपः—कोणप
करालः - कराल
कैलासः—कैलास
कपिलाली—कैलाली
कुड्मलम्—कुड्मल
करीरः—करिर
कणः—कान
कार्त्तिकैयपुरम्—कत्यूर
कादम्बः—कादम्व
कादम्बरीः—कादम्बरी
कुशुण्डा—कुसुण्डा

कुण्डिनः—कुण्डिन
कूपः—कुवा
कौपीनम्—कौपीन
कन्दलम्—कन्दल
कन्दर्पः—कन्दर्पः
कपर्दः—कपर्दी
कश्यपः—कश्यप
कामः—काम
काशिका - काशिका
काली—काली
कात्यायनस—कात्यायनस
कपिला—कपिला
काम्पीलः—काम्पील
कणादः—कणाद
कुणपः—कुणप
करण्डः—करण्ड
कैलासः—कैलास
कैलासी—कैलासी
कलसः—कलस
कालिका—कालिका
कर्णिकारः—कन्नर
कर्षः—कर्ष
कदम्बः—कदम
कादम्बिनी
कचूर—कचुर
कृपा—कृपा

करुणा—करुणा
कविः—कवि
कविता—कविता
कविकर्म—कविकर्म
कपिता - कपिता
करोः—करी
केरली—केरली
कर्णाटः—कर्णाट
कोङ्कणी—कोकनी
कुचैलः—कुचेल
कम्—क
करङ्कः—करङ्
कुटी—कुटी
कबन्धः—कबन्ध
कापथः—कुपन्थ
कसारः—कसार
करः—कर
करभः—करभ
कामन्दः—कामन्द
कापुरुषः—कापुरुष
कदाचारः—कदाचार
केदारनाथः—केदारनाथ
कीचकः—किचक
कपटः—कपट
कालुष्यम्—कालुष्य
कौरूप्यम् · कौरूप्य
कलसी - कलसिया
कालिमा—कालिमा

कारुण्यम्—कारुण्य
काव्यम्—काव्य
कवित्वम्—कवित्व
कपिः—कपि
कपित्थः—कैथ
करटी—करटी
केरली—केरली
कर्मारी—कमारी
कुषाणः—कुषाण
कूचरः—कूचर
कङ्कः—कङ्क
कटी—कटी
कति—कितना
क्रौञ्चः—कूँज
कासारः—कासार
कर्मारः—कमारा
करदः—करद
कलभः—कलभः
कामन्दकीयम्—कामन्दकीय
कदन्नम्—कदन्न
केदार—केदार
कर्णप्रयागः—कर्णप्रयाग
कपटी—कपटी
कापट्यम्—कापट्य
कुरूपम्—कुरूप
कुलूतः—कुलू
कामाद्रिः—काङ्गडा
कर्बुरः—कर्बुर

किर्मीरः—किर्मिर
किटी—किटी
किशोरी—किशरी
केशरः—केशरी
काठाः—काठा
कोष्ठम्—कोठा
काष्ठा—काष्ठा
क्रूरः—क्रूर
क्रूरता—क्रूरता
क्रोशः—कोश
कंसारि—कंसारि
कन्दर्ली—कन्दली
कर्दमः—कर्दम
कन्दः—कन्द
कन्दरः—कन्दर
कटः—चटाइ
कङ्कटः—कङ्कट
कर्कटः—केङ्कड़ा
कौशो—कौशो
कुरुः—कुरु
कौरवः—कौरव
कुलत्थः—कुल्थी
कुथा—कुथा
कन्थडिः—कन्थडि
कन्दर्पः—कन्दर्प
काद्रवेयः—काद्रवेय
कुरवकः—कुरबक
कुञ्जरः—कुञ्जर
कासरः—कासर
कर्पूरम्ः—कपूर

किरी—किरी
किशोरः—किशोर
कैशोरम्—कैशोर
कठः—कठ
कौशुमः—कौशुम
कष्टम्—कष्ट
कालः—काल
कोद्रवः—कोदो
क्रूरत्वम्—क्रूरत्व
कंसः—कंस
कन्धरा कन्धरा
कर्दमः—कर्दम
कर्दमः—कांदा
कन्दरा—कन्दरा
कुन्दुरु—कुन्दुरु
कटकः—कटक
कर्कटः—कर्कट
काष्ठी—ठेकी
कौशिकी—कौशिकी
कुरुक्षेत्रम्—कुरुक्षेत्र
कुरुङ्गः—करुङ्ग
कुल्भाषाः—कुलथी
कन्था—कन्था
कन्थङः—कन्थड
करुणामयः—करुणामय
कावेरी—कावेरी
कूबरः—कूबर
कासारः—कासार
कृष्णसारः—कंसार

आब्रह्मन्…………

दक्ष ब्राह्मण वेद में सब बनें, आ राष्ट्र में तेजिले
शूरा स्वस्थ महारथी धनुधरा रक्षाक्षम क्षत्रिय।
गौवें धेनु समान दूध दुहती नन्दी बयल् हों बली
घोड़े वायुगती सुशील विदुषी नारी पुरन्ध्री भली।

योद्धा वीर रथस्य शत्रुविजयी विद्वान् युवा सभ्य हों
देवार्चो यजमान के सुत जने वीराग्रणी सद्गुणी।
पृथ्वी पे कृषि कर्म के समय में पर्जन्य वर्षे जल
खेती पाति फुलें फलें प्रचुर हों पाकें सभी औषधि।

योग क्षेम समान रूप सबका हो कल्प कल्पान्त में
मेधावी धन धान्य धर्म धृति से सम्बद्ध सारे रहें।
शान्ति स्वस्तिक सङ्घ शक्ति जनमें जागें जगायें जगत्
विश्व स्वस्थ रहे सदा जय रहे कल्याण हो लोक का

—नरहरिः

शाके १९१०
संवत् २०४५
वैशाखी पूर्णिमा
प्रथमावृत्तिः ५०००

मुद्रक:
के० एल० एम० आर्ट प्रिन्टर्स
२२४, जनता मार्केट, रानी भांसी रोड
भण्डेवाला, नवदेहली-११००५५

वैदिकः सिद्धान्तः

विद्यार्थिलक्षणम्

हिन्दूजागरणम्

भाषासुधारकोषः

नहिज्ञानेन सदृशम् पवित्रमिह विद्यते

मातृभाषा-मुखेनैव संस्कृतं ज्ञायतेऽखिलैः

विश्वहिन्दू-महासभा

विश्वभाषा

तेरे घर में लगी आग

जाग ! हिन्दु !! जाग !!!